एक प्रार्थना, एक उत्कृष्ट कर्म, एक राजसी विचार मानव के बल को कर सकता है युक्त विश्वातीत शक्ति से । तब बना दिया जाता है चमत्कार सामान्य नियम, एक महान कृत्य बदल सकता है घटनाक्रम को; एकाकी चिन्तन एक, बन जाता है सर्वशक्तिमान ।

फूल वनस्पति जगत की प्रार्थनाएं हैं

(श्रीअरविन्द सोसायटी राजस्थान राज्य समिति, जयपुर द्वारा संकलित)

प्रार्थना

श्रीमाँ तथा श्रीअरविन्द की रचनाओं से संकलित

प्रथम संस्करण २०१५

प्रार्थना : श्रीअरविन्द तथा श्रीमाँ की रचनाओं से संकलित
प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, राजस्थान राज्य समिति, जयपुर
मुद्रक : श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पुदुच्चेरी

© स्वाधिकार सुरक्षित : श्रीअरविन्द आश्रम ट्रस्ट, पुदुच्चेरी

प्रकाशक : श्रीअरविन्द सोसायटी, राजस्थान राज्य समिति, जयपुर ।

मुद्रक : श्रीअरविन्द आश्रम प्रेस, पुदुच्चेरी

मूल्य : ५० रु.

Prarthana

A compilation from the writings of the Mother and Sri Aurobindo

Published by : Sri Aurobindo Society, Rajasthan State Committee, Jaipur

Printed at : Sri Aurobindo Ashram Press, Puducherry
Printed in India

Website : www.aurosociety.org

E-mail : sasrajasthan@aurosociety.org

विषय-सूची

1. श्रीअरविन्दः शरणं मम
2. ॐ आनन्दमयि...
3. ॐ तत् सत्...
4. गायत्री मन्त्र
ॐ असतो मा सद्गमय...
5. श्रीअरविन्द द्वारा लिखित अंग्रेजी मन्त्र
6. श्रीमाँ द्वारा लिखित मन्त्र
7. एक साधक को दी गई प्रार्थना
8. कृपा की शक्ति
9. प्रार्थना और नियतिवाद
10. प्रार्थना की सफलता के लिए शर्त
11. प्रार्थना क्यों ?
12. प्रार्थना कैसे करें ?
13. श्रीमाँ की प्रार्थनाएं
14. रोगमुक्ति की प्रार्थना के बारे में
15. प्रार्थना में कठिनाई
16. सामूहिक प्रार्थना
17. आश्रम स्कूल के छात्रालय के लिए प्रार्थना
18. प्रार्थना तथा अभीप्सा
19. शरीर के कोषाणुओं की प्रार्थना
20. प्रार्थना तथा आह्वान
21. कृपा और प्रार्थना
22. अतिमानस और प्रार्थना
23. प्रार्थना यन्त्र नहीं है
24. साधना के अंग
25. मन्त्र और जप
26. आन्तरिक और बाह्य वस्तुओं के लिए प्रार्थना
27. प्रार्थना और ध्यान
28. अनिवार्यताएं
28. राधा की प्रार्थना
29. कुछ नये साल की प्रार्थनाएं

प्रार्थना

जहाँ तक प्रार्थना का प्रश्न है, प्रार्थना करने का कार्य तथा इसके पीछे की मनोवृति, विशेषकर दूसरों के लिए की गई प्रार्थना स्वयं तुम्हें उच्चतर शक्ति की ओर उद्‌घाटित कर देती है, भले ही उस सम्बद्ध व्यक्ति पर जिसके लिए प्रार्थना की गई है, कोई प्रभाव न पड़े,...क्योंकि परिणाम आवश्यक रूप से व्यक्तियों पर निर्भर करता है कि क्या वे उद्‌घाटित अथवा ग्रहणशील हैं या उनमें कुछ ऐसी चीज है जो उस शक्ति का प्रत्युत्तर दे सके जो प्रार्थना द्वारा नीचे लायी जाती है ।

— श्रीअरविन्द

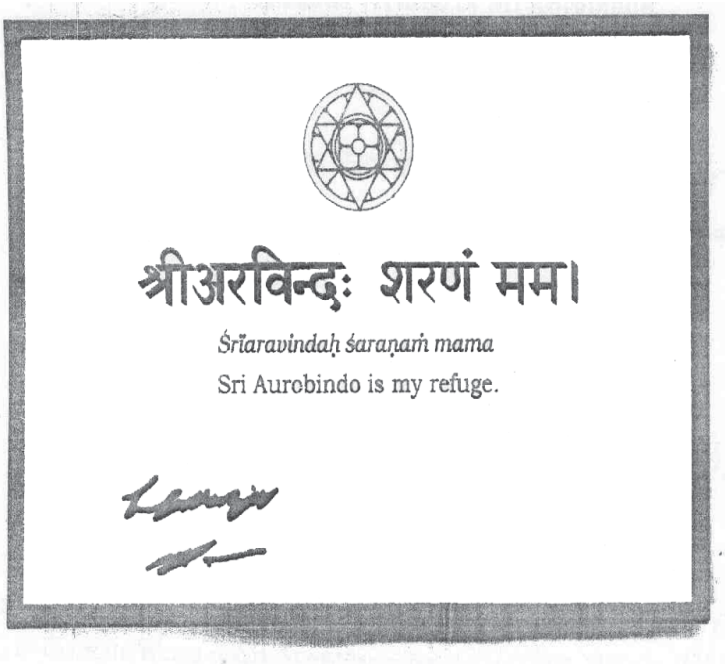
श्रीअरविन्दः शरणं मम।
Śrīaravindaḥ śaraṇaṁ mama
Sri Aurobindo is my refuge.

श्रीअरविन्द द्वारा लिखित संस्कृत मन्त्र

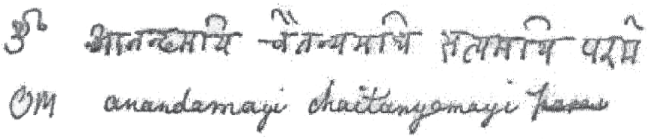

ॐ आनन्दमयि चैतन्यमयि सत्यमयि परमे

श्रीअरविन्द ने यह मन्त्र 1927 के आसपास रिकॉर्ड ऑफ योग से सम्बन्धित एक टिप्पणी के रूप में लिखा था । कृपया ध्यान दें कि संस्कृत से अंग्रेजी में रूपान्तर उन्होंने पूरा नहीं किया । बहुत बाद में श्रीमाँ ने उसे पूरा किया जो नीचे दी गई अनुलिपि में स्पष्ट है ।

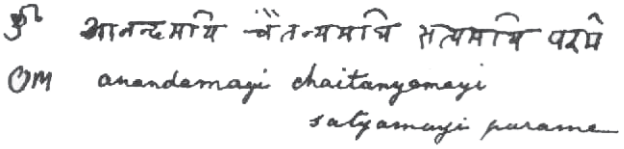

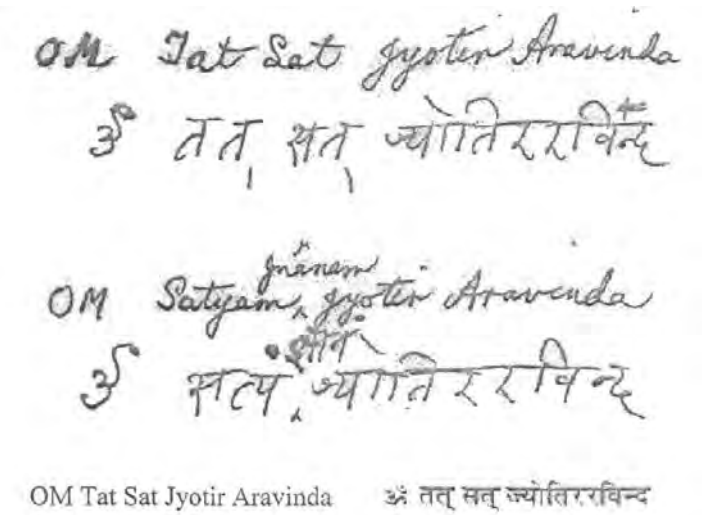

OM Tat Sat Jyotir Aravinda ॐ तत् सत् ज्योतिरररविन्द

श्रीअरविन्द द्वारा दिया गया गायत्री मन्त्र

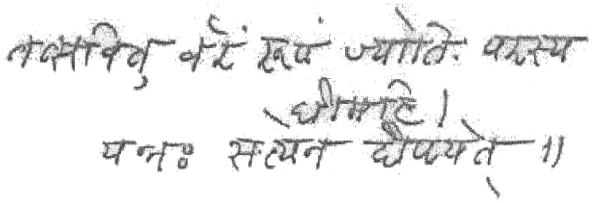

तत्सवितुर्वरं रूपं ज्योतिः परस्य धीमहि।
यन्नः सत्येन दीपयेत्॥

सावित्री के शुभतम (सर्वोत्तम) रूप, परम सत्ता की ज्योति पर ध्यान करें जो हम सबको सत्य से प्रकाशित कर देगी ।

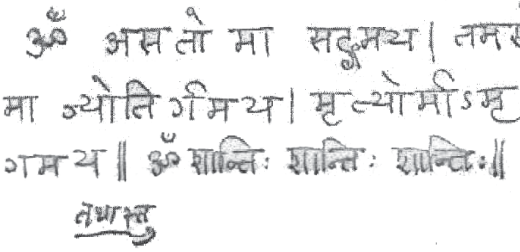

ॐ असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

तथास्तु

श्रीअरविन्द के एक शिष्य ने बृहदारण्यक उपनिषद् से यह उद्धरण अपने नोटबुक में लिखा । श्रीअरविन्द ने उसके नीचे लिखा "तथास्तु" ।

श्रीअरविन्द द्वारा लिखित अंग्रेजी में मन्त्र

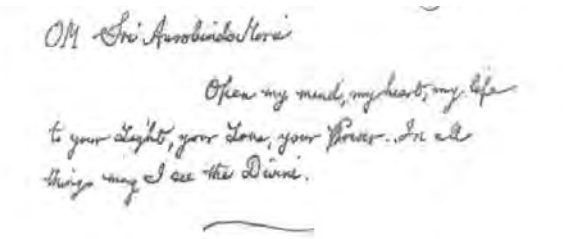

"ओम श्रीअरविन्द मीरा, अपनी ज्योति, अपने प्रेम, अपनी शक्ति के प्रति मेरे मन, मेरे हृदय तथा मेरे जीवन को उद्घाटित करें । सभी चीजों में मैं भगवान के दर्शन करूँ ।"

प्रश्न : सन् 1935 में मैंने आप से एक मन्त्र मांगा था और आपने अपना और श्रीमाँ के नाम को मिला कर एक मन्त्र बनाने की सलाह दी थी । मैंने तदनुसार यह मन्त्र बनाया : "ओम श्री मीरा श्रीअरविन्दाय नमः" और आप की स्वीकृति के लिए भेजा । मैंने इसका कुछ दिनों तक अभ्यास किया परन्तु मैंने एक अन्य प्रार्थना की मांग करने की आवश्यकता महसूस की जिसमें आप दोनों के नामों के संयोग के साथ ही कुछ अभीप्सा या प्रार्थना संयुक्त हो और उसमें कुछ एकाग्रता की आवश्यकता पड़े । मैं समझता हूँ यदि आप मेरे लिए ऐसा संयुक्त नामों का मन्त्र बना सकें तो उसमें मेरी अधिक श्रद्धा होगी ।

उत्तर : मैंने तुम्हारे लिए नामों के साथ मन्त्र के रूप में एक संक्षिप्त प्रार्थना लिखी है । मैं आशा करता हूँ कि इससे तुम्हें अपनी कठिनाई पर विजय प्राप्त करने में तथा आन्तरिक आधार बनाने में सहायता मिलेगी ।

प्रश्न : मैं मंत्र और प्रार्थना के लिए कृतज्ञ हूँ, विशेष कर प्रार्थना की अन्तिम पंक्ति — सभी वस्तुओं में भगवान के दर्शन करूँ — से मुझे प्रसन्नता हुई । क्या मैं नामों तथा प्रार्थना को एक मन्त्र समझूं ?

उत्तर : हाँ

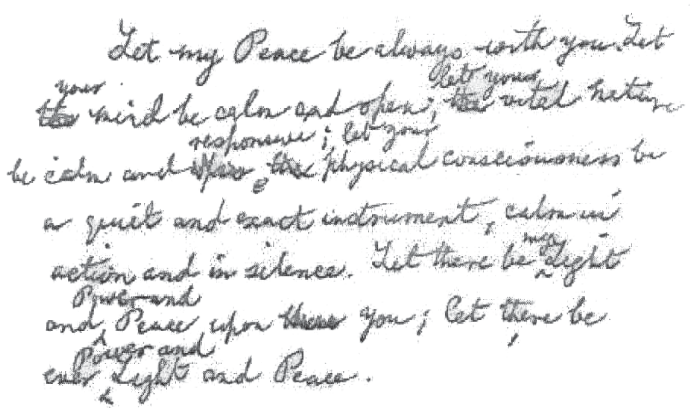

मेरी शान्ति सदा तुम्हारे साथ रहे । तुम्हारा मन शान्त तथा उद्घाटित हो । तुम्हारी प्राणिक प्रकृति शान्त तथा सहानुभूतिपूर्ण हो । तुम्हारी भौतिक चेतना एक अचंचल तथा सही यन्त्र बने, क्रियाशीलता तथा नीरवता में स्थिर। मेरी ज्योति तथा शक्ति तथा शान्ति तुम्हारे ऊपर बनी रहे । शक्ति तथा ज्योति तथा शान्ति सदा तुम्हारे साथ रहे ।

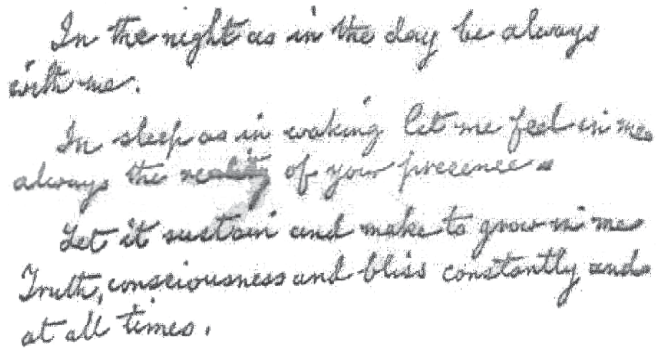

संग-संग रहना सदा निशि-दिन मेरे, सोये रहें या जागे रहें, महसूस करने देना अन्दर मेरे सर्वदा, सचाई उपस्थिति की तेरी । बनी रहे और करती रहे वर्धित अन्दर मेरे, सत्-चित्-आनन्द, सदा सर्वदा के लिए ।

CWSA 35 : pp.829-833 — श्रीअरविन्द

श्रीमाँ द्वारा लिखित मन्त्र

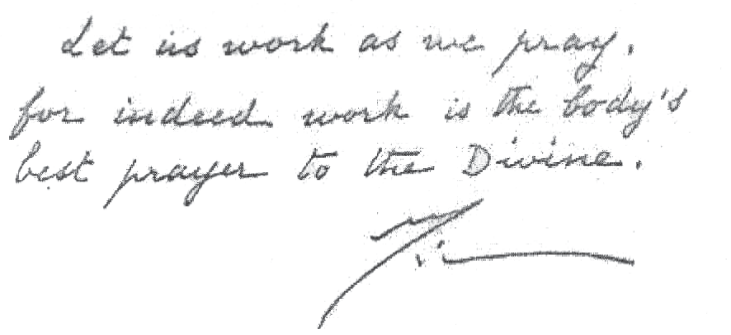

जैसी हम प्रार्थना करते हैं वैसा ही कर्म करें क्योंकि वास्तव में कर्म भगवान को अर्पित शरीर की सर्वोत्तम प्रार्थना है ।

11 दिसम्बर 1945

भगवान के लिए कार्य करना शरीर द्वारा उनकी प्रार्थना है ।

CWM, Vol.14 : p.297 — श्रीमाँ

प्रार्थना, हाँ — लेकिन तुरन्त पूरा किये जाने का आग्रह करनेवाली प्रार्थना नहीं, बल्कि ऐसी प्रार्थना जो स्वयं ही है भगवान के साथ मन और हृदय की घनिष्ठता जो अपनी प्रसन्नता और सन्तुष्टि प्राप्त कर सके । अपने समय पर भगवान द्वारा पूरा किये जाने का भरोसा करनेवाली प्रार्थना !

— श्रीअरविन्द

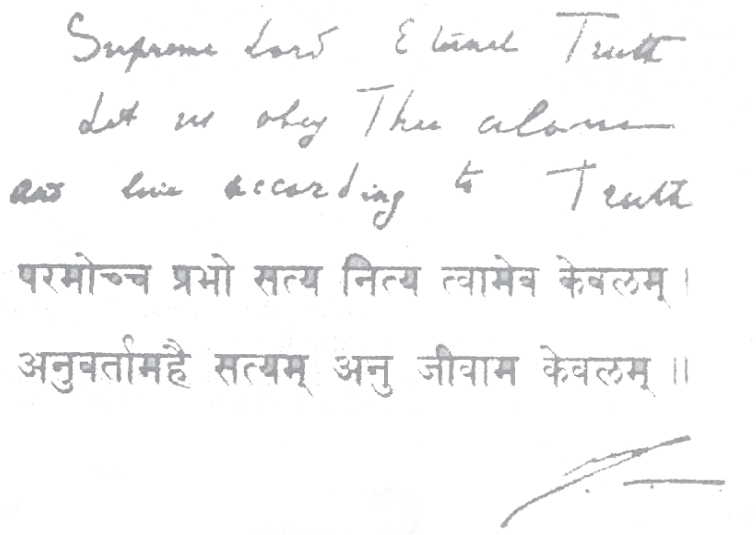

हे परमेश्वर ! हे शाश्वत सत्य ! वर दे कि हम सब केवल तेरा ही आदेश-पालन करें तथा सत्य के अनुकूल ही जीवनयापन करें ।

— श्रीमाँ

नोट : यह प्रार्थना श्रीमाँ द्वारा 1971 में श्रीअरविन्दोज ऐक्शन के लिए दिया गया था ।

प्राणिक प्रार्थना : दृढ़ता तथा अध्यवसाय
मानसिक प्रार्थना : विशुद्धता
समग्र प्रार्थना : भागवत चेतना

— श्रीमाँ

एक साधक को श्रीअरविन्द द्वारा दी गई प्रार्थना

1. मुझे क्रोध, कृतघ्नता तथा मूर्खतापूर्ण अहंकार से मुक्ति दीजिये । मुझे शान्त, विनम्र तथा भद्र बनाइये । अपने कार्य में तथा मेरे अपने समस्त कर्म में आपका दिव्य नियन्त्रण महसूस करूँ ।

5 नवम्बर 1938

2. मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे हठ तथा स्वाग्रह से शुद्ध कर दिया जाये जिससे मैं श्रीमाँ के प्रति विनीत तथा आज्ञापरायण होऊँ, उनके कार्य का एक योग्य यन्त्र बन सकूँ तथा मैं जो भी करूँ उसमें उनकी कृपा के प्रति समर्पित होकर उनसे मार्गदर्शित होता रहूँ ।

CWSA, 35: p.843 — श्रीअरविन्द

यदि तुम इस भय के साथ प्रार्थना या अभीप्सा करो कि यह नहीं सुनी जायेगी तथा भागवत प्रत्युत्तर पर सन्देह करो तब विरोधी शक्तीयों, जो घात लगाये रहती हैं, भय के तथा सन्देह माध्यम से तुम्हारी चेतना में प्रवेश कर दुष्टता करेंगी । इसलिए तुम्हें सच्चे विश्वास के साथ प्रार्थना करनी चाहिये ।

— श्रीमाँ

'कृपा' की शक्ति

सच तो यह है कि यदि तुम पूर्ण रूप से केवल एक मिनट के लिए, एक लघु क्षण के लिए भी इस पूर्ण सच्ची अभीप्सा या इस पर्याप्त तीव्रता के साथ प्रार्थना को जी सको तब तुम घण्टों भर के ध्यान की अपेक्षा कहीं अधिक ज्ञान प्राप्त कर लोगे ।...

पूर्ण रूप से, भागवत कृपा पूर्ण रूप से कर्म के विधान का खण्डन करती है । यह धूप में रखे गये मक्खन की तरह इसे पिघला देती है ।...

बिलकुल, यदि तुम्हारे अन्दर पर्याप्त सच्ची अभीप्सा या पर्याप्त तीव्र प्रार्थना उठती है तब तुम अपने अन्दर कुछ ऐसी चीज ले आते हो जो हर चीज को बदल देगी, हर चीज को, सचमुच हर चीज को बदल देती है ।... उन्हें केवल सीढ़ियों पर चढ़ना है । द्वार खोलने के लिए उन्हें चाभी देनी होगी । सीढ़ी पर जाने के लिए एक द्वार है जिसके लिए एक चाभी की आवश्यकता है । चाभी है, जैसा कि मैंने तुम्हें अभी कहा, अभीप्सा जो पर्याप्त रूप से सच्ची हो अथवा प्रार्थना जो पर्याप्त रूप से तीव्र हो । मैंने 'अथवा' कहा है किन्तु मैं नहीं समझती कि 'अथवा' होना चाहिये । कुछ लोग अभीप्सा अधिक पसन्द करते हैं और कुछ दूसरे लोग प्रार्थना । किन्तु दोनों में ही जादू की शक्ति है । तुम्हें यह जानना होगा कि इसका उपयोग कैसे किया जाये ।

श्रीअरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र बुलेटिन 24 अप्रैल, 1968 — श्रीमाँ

लेकिन माँ, जब कोई व्यक्ति सच्चाई के साथ 'कृपा' के हस्तक्षेप की प्रार्थना करता है तो क्या वह एक विशेष परिणाम की आशा नहीं करता ?

क्षमा करना, यह प्रार्थना के अभिप्राय पर निर्भर है । यदि कोई 'कृपा' या 'भगवान्' का मात्र आह्वान करता है और स्वयं को 'उस' के हाथों में सौंप देता है तो वह किसी विशेष परिणाम की अपेक्षा नहीं करता । किसी विशेष परिणाम की आशा के लिए व्यक्ति की अपनी प्रार्थना को सूत्रबद्ध करना होगा, किसी चीज के लिए निवेदन करना होगा । यदि तुम भगवान् की कृपा के लिए केवल एक महत् अभीप्सा करते हो और उसका आह्वान करते हो, उससे अनुनय-विनय करते हो — उससे कोई निश्चित वस्तु मांगे बिना — तो 'कृपा' ही यह चुनेगी कि वह तुम्हारे लिए क्या करे, तुम नहीं ।

यह तो और अच्छा है, है न ?

आह ! यह बिलकुल दूसरा प्रश्न है ।

क्यों, शायद यह अपनी गुणवत्ता में उच्चतर है लेकिन फिर भी, यदि व्यक्ति कोई सुनिश्चित वस्तु चाहता है तो उसे सूत्रबद्ध करना बेहतर है । यदि व्यक्ति के पास 'कृपा' के आह्वान के लिए विशेष कारण है, तो उसे सुनिश्चित रूप से और स्पष्टतया सूत्रबद्ध कर लेना बेहतर है ।

निस्संदेह, यदि कोई पूर्ण समर्पण की स्थिति में है और स्वयं को समग्रतया अर्पित कर देता है, यदि कोई स्वयं को केवल 'कृपा' को सौंप देता है और उसे वह करने देता है जो वह चाहे तो बहुत अच्छी बात है । लेकिन उसके बाद व्यक्ति को यह सवाल नहीं करना चाहिये कि 'कृपा' क्या करती है । व्यक्ति को उससे यह नहीं कहना चाहिये, "मैंने तो वह इस विचार से किया था कि यह प्राप्त होगा ।" क्योंकि यदि कोई सचमुच किसी वस्तु को प्राप्त करने का विचार रखता है तो उसको पूरी सच्चाई के साथ सूत्रबद्ध करना बेहतर है, एकदम वैसे जैसे वह उसको देख रहा हो । उसके बाद, यह चुनाव करना 'कृपा' पर है कि वह करेगी या नहीं लेकिन हर हालत में व्यक्ति को स्पष्टतया सूत्रबद्ध करना होगा कि वह क्या चाहता है । और इसमें कोई हानि नहीं है ।

यह अनुचित तब होती है जब निवेदन नहीं माना जाता और व्यक्ति विद्रोह

कर देता है । तब स्वभावतः ही बात बुरी हो जाती है । उसी समय व्यक्ति को समझना चाहिये कि उसकी इच्छा या अभीप्सा बहुत प्रबुद्ध न रही हो और उसने शायद कोई ऐसी चीज मांगी हो जो ठीक-ठीक वैसी न हो जो उसके लिए अच्छी हो । तब उस क्षण व्यक्ति को समझदार होना चाहिये और मात्र यह कहना चाहिये, "अच्छा, तेरी इच्छा पूरी हो ।" लेकिन जब तक व्यक्ति में आंतरिक बोध और आंतरिक पसंद है, इसको सूत्रबद्ध करने में कोई हानि नहीं है । यह बहुत स्वाभाविक गति है ।

उदाहरण के लिए, यदि कोई नासमझ है या उसने कोई गलती की है और वह सचमुच ईमानदारी से उसे फिर नहीं करना चाहता तो यह मांगने में मैं कोई हानि नहीं देखती । और वास्तव में, यदि कोई सच्चाई के साथ — सच्ची आंतरिक सच्चाई के साथ — मांगता है, तो बहुत संभव है कि उसकी याचना स्वीकृत हो जाये ।

तुम्हें यह नहीं सोचना चाहिये कि भगवान् तुम्हारा विरोध करना चाहते हैं । भगवान् विरोध करने के कतई इच्छुक नहीं हैं ! लेकिन भगवान् तुम्हारी अभीप्सा का विरोध केवल तभी करते हैं जब यह पूर्णरूपेण अपरिहार्य हो जाता है । अन्यथा वे सदैव वह देने के लिए तत्पर रहते हैं जो तुम मांगते हो ।

CWM, Vol.8 : pp.255-56 — श्रीमाँ

तुम अपने आपको अपने समस्त हृदय तथा समस्त शक्ति के साथ भगवान के हाथों में सौंप दो । कोई शर्त न रखो, कुछ मांगो नहीं, योग में सिद्धि की भी मांग न करो, कुछ भी नहीं सिवा इसके कि सीधा तुममें और तुम्हारे द्वारा उनका संकल्प पूरा हो । जो उनसे मांग करते हैं, भगवान उसकी मांग पूरी करते हैं । लेकिन जो लोग कुछ मांगते नहीं और अपने आपको उन्हें सौंप देते हैं उन्हें वे उनकी जरूरत के अलावा अपने आपको तथा अपने प्रेम के सहज वरदान दे देते हैं ।

— श्रीअरविन्द

प्रार्थना और नियतिवाद

श्रीमाँ की वाणी

वहाँ ऊपर है असीम स्वाधीनता का क्षेत्र ।... तुमसे कौन कहता है कि पर्याप्त सच्ची अभीप्सा, पर्यात्प उत्कट प्रार्थना उन्मीलन के मार्ग को परिवर्तित करने में सक्षम नहीं है ?

इसका अर्थ है कि सब कुछ संभव है ।

तो, व्यक्ति में पर्याप्त अभीप्सा होनी चाहिये और ऐसी प्रार्थना होनी चाहिये जो पर्याप्त उत्कट हो । यह मानव प्रकृति को प्रदान की गयी है । यह भगवान् की कृपा द्वारा मानव प्रकृति को प्रदत्त अद्‌भुत उपहारों में से एक है, सिर्फ यह बात है कि वह नहीं जानता कि इसका उपयोग कैसे किया जाये ।

निष्कर्ष यह है कि समतल मार्ग में अत्यधिक सुनिश्चित नियतिवादों के बावजूद, यदि व्यक्ति यह जानता है कि इन समतल मार्गों को कैसे पार करे और चेतना के उच्चतम बिन्दु पर पहुंचे तो वह चीजों को बदलने में समर्थ होता है । ऐसी चीजों को स्पष्टतया पूर्णरूपेण सुनिश्चित हों इसलिये तुम इसे जो चाहो वह नाम दे सकते हो लेकिन यह असीम नियतिवाद और असीम स्वाधीनता का एक तरह का संयोग है । तुम जिस ढंग से चाहो, स्वयं को इससे बाहर खींच सकते हो लेकिन बात है ऐसी ही ।

जब तुम 'नियतिवाद' कहते हो और जब 'स्वाधीनता' कहते हो तो केवल शब्द बोलते हो और यह सब उसका अत्यन्त अपूर्ण, अत्यन्त स्थूल, निहायत कमजोर विवरण मात्र है जो कि वास्तव में तुम्हारे भीतर, तुम्हारे चारों ओर तथा सर्वत्र विद्यमान है; और सृष्टि क्या है — यह समझाना शूरू करने के लिए समर्थ होने के हेतु तुमको अपने मानसिक सूत्रों से बाहर आना होगा अन्यथा तुम कभी कुछ नहीं समझोगे ।

सच तो यह है कि यदि तुम पूर्णतया सच्ची अभीप्सा या इस पर्याप्त उत्कट प्रार्थना का एक क्षण — एक लघु क्षण मात्र — जी लो तो घंटों ध्यान करने की अपेक्षा अधिक बातें जान लोगे ।

प्रश्न : — आपने यहां कहा है कि हम 'कर्म की शृंखला से बंधे हुए हैं ।' लेकिन कभी कभी जब भगवान् की कृपा कार्य करती है तो...

पूरी तरह, भगवान् की कृपा पूरी तरह कर्म विधान का विरोध करती है; यह समझो कि वह इसे धूप में रखे हुए मक्खन की तरह पिघला देती है ।

मैं अभी यही बात कह रही थी । यही है, यदि तुममें पर्याप्त सच्ची अभीप्सा है और पर्याप्त उत्कट प्रार्थना है तो तुम अपने भीतर ऐसी 'चीज' को उतार सकते हो जो सब कुछ — सभी कुछ — बदल देगी । एक उदाहरण दिया जा सकता है जो नितान्त सीमित, बहुत छोटा है लेकिन जो तुम्हें यह बात बहुत अच्छी तरह समझाता है । एक पत्थर बिलकुल यंत्रवत् गिरता है, मान लो, एक खपरा गिरता है (यदि यह ढीला हो जाये तो यह गिरेगा । गिरेगा न ?) लेकिन अगर, उदाहरणार्थ, उधर से जा रहे किसी व्यक्ति से प्राणिक या मानसिक नियतिवाद वहां आ जाये और व्यक्ति न चाहे कि पत्थर गिरे तथा अपना हाथ फैला दे तो यह उसके हाथ पर गिरेगा, जमीन पर नहीं गिरेगा । तो उस व्यक्ति ने इस पत्थर या खपरे की नियति को बदल दिया । एक दूसरे नियतिवाद ने प्रवेश किया और पत्थर किसी के सिर पर गिरता, इसके बजाय हाथ पर गिरा और इसने किसी को नहीं मारा । यह एक दूसरे से हस्तक्षेप है, चेतन संकल्प का हस्तक्षेप है जो न्यूनाधिक यांत्रिकता के भीतर प्रवेश करता है...

जैसा कि मैंने अभी कहा है, कुंजी है पर्याप्त सच्ची अभीप्सा अथवा पर्याप्त उत्कट प्रार्थना । मैंने 'अथवा' कहा लेकिन मैं नहीं सोचती कि 'अथवा' है । कुछ लोग हैं जो एक चीज को अधिक पसंद करते हैं, कुछ हैं जिनको दूसरी पसंद है । लेकिन दोनों में ही जादुई शक्ति है । तुम्हें यह जानना चाहिये कि इसका उपयोग कैसे किया जाये ।...

चमत्कारों की आवश्यकता ऐसी वस्तु की सचेतन अभीप्सा में बदल जानी

हे प्रभु, मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरे कदमों को रास्ता दिखा, मेरे मन को प्रकाशित कर ताकि मैं हर क्षण और हर चीज में ठीक वही करूँ जो तू मुझसे कराना चाहता है ।

— श्रीमाँ

चाहिये जो वहां पहले से विद्यमान है, जिसका अस्तित्व है, जो इन सब अभीप्साओं के सहयोग से प्रकट होगी; ये सब अभीप्साएं आवश्यक हैं अथवा, यदि कोई इसको अधिक सच्चे रूप में देखे तो ये शाश्वत प्रकटीकरण में संलग्न वस्तु हैं — मनोहर संगत हैं ।

निस्सन्देह, बहुत कठोर तर्कवाले लोग तुमसे कहते हैं, "प्रार्थना क्यों ? अभीप्सा क्यों ? याचना क्यों ? भगवान् जो चाहते हैं, वही करते हैं और जो चाहेंगे वही करेंगे ।" यह बात पूर्णतया स्पष्ट है, इसे कहने की आवश्यकता नहीं लेकिन यह प्रेरणा : 'हे प्रभु, प्रकट हो !' भगवान् के प्रकटीकरण को अधिक उत्कट स्पन्दन प्रदान करती है ।

अन्यथा भगवान् ने इस दुनिया को वैसी न बनाया होता जैसी यह है । संसार जो कुछ है, एक बार पुनः वही बन जाने की संसार की अभीप्सा की उत्कटता में एक विशिष्ट शक्ति, विशिष्ट आनन्द, विशिष्ट स्पन्दन है ।

और यही कारण है कि अंशतः खंडमय क्रम-विकास है ।

शाश्वत रूप से परिपूर्ण विश्व, शाश्वत परिपूर्णता को शाश्वत रूप से अभिव्यक्त करनेवाला विश्व प्रगति के आनन्द से रहित होगा ।

CWM, Vol.5 : pp.89-93 — श्रीमाँ

दैनिक प्रार्थनाएं

हे प्रभो, मुझे तेरे ऊपर वह शान्त विश्वास प्रदान कर जो सभी कठिनाइयों को जीत लेता है ।

***

हे प्रभो, मुझे भय और चिंता से मुक्त कर ताकि मैं अपनी सर्वोत्तम क्षमता के साथ तेरी सेवा कर सकूं ।

***

हे प्रभो,, मुझे समस्त गर्व से मुक्त कर; मुझे विनीत और सच्चा बना ।

***

— श्रीमाँ

प्रार्थना की सफलता के लिए शर्त

सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त है लगभग बालोचित आस्था, शिशु की निष्कपट आस्था जिसे पूरा विश्वास होता है कि यह अवश्य होगा, जो इसके बारे में स्वयं से पूछता तक नहीं । जब उसे किसी चीज की आवश्यकता होती है तो उसे निश्चय होता है कि यह आ रही है । हां, ऐसी, इस तरह की आस्था — वस्तुतः यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शर्त है ।

अभीप्सा करना अपरिहार्य है । लेकिन कुछ लोग अपने भीतर विश्वास और विश्वासहीनता, आस्था और अनास्था, विजय के प्रति आश्वस्त आशावाद एवं ऐसे निराशावाद के बीच जो स्वयं से पूछता रहता है कि विध्वंस कब होगा — ऐसे द्वंद्व के साथ अभीप्सा करते हैं । अब यदि सत्ता में यह है तो तुम अभीप्सा कर सकते हो लेकिन कुछ पाते नहीं । और तुम कहते हो — "मैंने अभीप्सा की लेकिन कुछ नहीं मिला ।" ऐसा इसलिए है क्योंकि तुम हर समय अपने आत्मविश्वास की कमी से अपनी अभीप्सा को ध्वस्त कर देते हो । लेकिन यदि तुम सचमुच आस्था रखते हो — बच्चों को उन्हीं पर छोड़ दें और बड़े लोगों द्वारा उनको बिगाड़ा न जाये तो उनमें ऐसी आस्था होती है कि सब ठीक होगा । उदाहरण के लिए, जब उनके साथ कोई छोटी दुर्घटना हो जाती है तो वे यह कभी नहीं सोचते कि कोई गंभीर बात होने जा रही है; वे सहज भाव से मान लेते हैं कि यह जल्दी निबट जायेगी और यह विश्वास उसे समाप्त करने में शक्तिशाली ढंग से सहायता करता है ।

हां तो, जब कोई 'शक्ति' के लिए अभीप्सा करता है, जब कोई भगवान् से सहायता मांगता है, यदि कोई इस अविचल निश्चिति के साथ मांगता है कि वह आयेगी तो यह असंभव है कि वह न आये, तो वह निश्चय ही आयेगी । यह इस प्रकार — यह सचमुच आंतरिक उद्घाटन है, यह विश्वासपूर्णता । और कुछ लोग निरन्तर इसी स्थिति में रहते हैं । जब कोई चीज ग्रहण करनी होती है तो वे उसे ग्रहण करने के लिए सदैव मौजूद रहते हैं । दूसरे लोग हैं कि जब कुछ चीज पानी होती है, कोई शक्ति उतरती है तो सदा अनुपस्थित रहते हैं, वे हमेशा उस क्षण बंद रहते हैं, जबकि वे लोग जिनमें यह बालसुलभ आस्था होती है, हमेशा सही समय पर ग्रहण करने के लिए मौजूद रहते हैं ।

और आश्चर्य है — है न — बाहरी रूप से कोई अन्तर नहीं है । उनमें ठीक-ठीक एक जैसी सदिच्छा हो सकती है, वही अभीप्सा, सत्कार्य करने का एक जैसा संकल्प हो सकता है लेकिन जिन लोगों में यह प्रफुल्लित विश्वास होता है, वे शंका नहीं करते, वे स्वयं से यह नहीं पूछते कि उन्हें यह चीज प्राप्त होगी या नहीं, भगवान् उत्तर देंगे या नहीं — कोई संदेह नहीं उत्पन्न होता, यह तो समझने की बात है ।... "मुझे जो चाहिये, वह दिया जायेगा, यदि मैं निवेदन करूंगा तो उत्तर मिलेगा, यदि मैं किसी मुश्किल में हूं और सहायता मांगूं तो सहायता मिलेगी — और मात्र मिलेगी नहीं, सब कुछ व्यवस्थित कर लेगी ।" यदि आस्था है — सहज, निष्कपट, संदेहरहित — तो यह अन्य किसी चीज से बेहतर कार्य करती है और परिणाम अद्‌भुत होते हैं । मन के विरोधाभासों और संदेहों से, मुश्किलों में आनेवाली इस तरह की धारणा से व्यक्ति सब कुछ बिगाड़ देता है : "ओह ! यह असंभव है । मैं इसे कभी नहीं संभालूंगा । और यदि यह बदतर हो जाये, यदि यह स्थिति जिसमें मैं हूं और जिसे मैं नहीं चाहता और अधिक खराब हो जाये, यदि मैं और अधिक आगे सरकता रहूं, यदि, यदि, यदि..." इस तरह, और व्यक्ति अपने तथा उस शक्ति के बीच जिसे वह ग्रहण करना चाहता है, एक दीवार खड़ी कर लेता है । चैत्य पुरुष में यह आस्था होती है और होती है उत्कृष्ट रूप में — बिना किसी छाया के, बिना किसी तर्क के, बिना किसी विरोधाभास के । और जब ऐसा हो तो ऐसी कोई प्रार्थना नहीं जिसका उत्तर न मिले, ऐसी कोई अभीप्सा नहीं जो चरितार्थ न हो ।

CWM, Vol.6 : pp.403-04 — श्रीमाँ

प्रार्थना क्यों ?

मनुष्य का जीवन उसकी शारीरिक एवं प्राणिक सत्ता में ही नहीं, अपितु उसकी मानसिक एवं आध्यात्मिक सत्ता में भी आकांक्षाओं तथा आवश्यकताओं का और इसलिए, कामनाओं का जीवन है । जब उसे यह ज्ञान होता है कि एक महत्तर शक्ति संसार का संचालन कर रही है तब वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए,

अपनी विषम यात्रा में सहायता के लिए, अपने संघर्ष में रक्षा तथा आश्रय प्राप्त करने के लिए प्रार्थना द्वारा उसकी शरण लेता है । प्रार्थना द्वारा भगवान् की ओर साधारण धार्मिक पहुंच, अपने को भगवान् की ओर मोड़ देने के लिए यह प्रार्थनारूपी विधि हमारी धार्मिक सत्ता का मौलिक प्रयत्न है और एक सार्वभौम सत्य पर स्थित है भले ही इसमें कितनी भी अपूर्णताएं क्यों न हों, और सचमुच अनेक अपूर्णताएं हैं ही, विशेषकर वह वृत्ति जो मानती है कि भगवान् को प्रशंसा, अनुनय-विनय और उपहारों से रिझाकर, रिश्वत देकर, उसकी चापलूसी करके उसकी अनुमति या अनुग्रह प्राप्त किया जा सकता है ।

प्रार्थना के प्रभाव को प्रायः संदेह की दृष्टि से देखा जाता है और स्वयं प्रार्थना अयुक्तियुक्त एवं निश्चितरूपेण निरर्थक तथा निष्फल चीज समझी जाती है । यह ठीक है कि वैश्व संकल्प सदैव अपने लक्ष्य को ही कार्यान्वित करता है और व्यक्ति के अहं की स्वार्थपूर्ण स्तुति एवं प्रार्थना से पथभ्रष्ट नहीं हो सकता । यह सच है कि जो परात्पर पुरुष विश्व-विधान में अपने-आपको व्यक्त करता है वह सर्वज्ञ होने के कारण अपने बृहत्तर ज्ञान से कर्तव्य-कर्म अवश्यमेव पहले से ही जान लेता है और उसे मानव विचार के द्वारा मार्गनिर्देश या प्रेरणा प्राप्त करने की जरूरत नहीं, और किसी भी जगद्व्यवस्था में व्यक्ति की कामनाएं सच्चा निर्धारक तत्त्व नहीं हैं और न हो सकती हैं । परंतु यह व्यवस्था या वैश्व संकल्प की सिद्धि निरे यांत्रिक नियम से नहीं, बल्कि कुछ एक शक्तियों एवं बलों के द्वारा कार्यान्वित होती है । उन शक्तियों एवं बलों में से, कम-के-कम मानव-जीवन के लिए, मानव संकल्प, अभीप्सा और श्रद्धा कुछ कम महत्व की नहीं । प्रार्थना उस संकल्प, अभीप्सा और श्रद्धा का एक विशेष रूप मात्र है । प्रार्थना के ढंग अनेक बार अधकचरे होते हैं और केवल बालसदृश ही नहीं, — जो अपने-आपमें कोई दोष नहीं है, — बल्कि बालिश भी होते हैं; फिर भी इसमें एक वास्तविक शक्ति और अर्थ है । इसका बल और मर्म है — मनुष्य के संकल्प, अभीप्सा और श्रद्धा का दैवी संकल्प के साथ संबंध जोड़ना, इस भाव से कि वह दिव्य संकल्प चिन्मय पुरुष का संकल्प है जिसके साथ हम अनेकविध सचेतन और सजीव संबंध स्थापित कर सकते हैं । हमारा संकल्प और अभीप्सा हमारे अपने बल-पुरुषार्थ से भी कार्य कर सकती है और वह बल-पुरुषार्थ,

निश्चय ही, चाहे निम्नतर और चाहे उच्चतर उद्देश्यों के लिए महान् एवं प्रभावपूर्ण वस्तु हो सकता है, — ऐसे अनुशासन कितने ही हैं जो कहते हैं कि एकमात्र इसी शक्ति का प्रयोग करना चाहिये, — अथवा हमारा संकल्प एवं अभीप्सा भागवत या वैश्व संकल्प के आश्रय पर या उसकी अधीनता में भी कार्य कर सकते हैं । इस पिछली विधि में हम यह समझ सकते हैं कि भागवत संकल्प हमारी अभीप्सा का प्रत्युत्तर तो देता है, पर प्रायः यंत्रवत्, शक्ति के एक प्रकार के नियम के अनुसार, या कम-से-कम सर्वथा निर्वैयक्तिक रूप में, अथवा हम यह मान सकते हैं कि वह मानव की आत्मा की दिव्य अभीप्सा एवं श्रद्धा को सचेतन रूप में प्रत्युत्तर देता है और सचेतन रूप में ही इसे अभीष्ट सहायता, मार्गनिर्देश, रक्षा तथा सफलता प्रदान करता है, **'योगक्षेमं वहाम्यहम्'** ।

प्रारंभ में प्रार्थना निम्न स्तर पर भी हमारे लिए इस संबंध को तैयार करने में सहायता पहुंचाती है । पर इस अवस्था में, हमारे अंदर जो बहुत-सी चीजें निरे अहंकार और आत्म-प्रवंचना से भरी होती हैं उनके साथ भी यह ताल मिलाये रहती है; तो भी आगे चलकर हम इसके मूल में निहित आध्यात्मिक सत्य की ओर बढ़ सकते हैं । इसलिए मुख्य वस्तु है इस प्रकार का साक्षात् संबंध, मनुष्य-जीवन का ईश्वर से संपर्क, सचेतन आदान-प्रदान न कि पार्थिव वस्तु की प्राप्ति । आध्यात्मिक विषयों में और आध्यात्मिक उपलब्धि की खोज में यह सचेतन संबंध महान् शक्ति है; यह हमारे पूर्णतः आत्म-निर्भर संघर्ष एवं प्रयास से अधिक महत्तर शक्ति है और इसके द्वारा पूर्णतर आध्यात्मिक उन्नति एवं अनुभूति प्राप्त होती है । अवश्य ही अंत में प्रार्थना या तो उस महत्तर वस्तु में जाकर समाप्त हो जाती है जिसके लिए इसने हमें तैयार किया था (असल में जब तक हमारे अंदर श्रद्धा, संकल्प, अभीप्सा हैं तब तक इनका प्रार्थना नामक रूप अपने-आपमें कुछ आवश्यक नहीं) अथवा यह केवल संबंध के हर्ष के लिए ही बनी रहती है । इसके उद्देश्य, इसके काम्य पदार्थ (अर्थ) भी उत्तरोत्तर ऊंचे-से-ऊंचे होते जाते हैं; फलतः अंत में हम सर्वोच्च अहेतुकी भक्ति प्राप्त कर लेते हैं जो अन्य किसी मांग या लालसा से रहित शुद्ध एवं सरल दिव्यप्रेम-रूपा भक्ति होती है ।

CWSA, v.23-24 : pp.566-68 — श्रीअरविन्द

प्रार्थना कैसे करें ?

तुमने भक्ति सिद्धांत पर बल दिया है कि व्यक्ति को केवल उनका नाम पुकारना है और उनको उत्तर देना होगा, उनको तुरंत आना होगा लेकिन यह किसके लिए सच है ? निस्सन्देह एक विशेष प्रकार के भक्त के लिए जो 'नाम' की शक्ति को अनुभव करता है, जिसमें 'नाम' की उमंग है और जो इसको अपनी पुकार में सन्निविष्ट करता है । यदि कोई ऐसा है तो तुरंत उत्तर संभव है — यदि नहीं तो व्यक्ति को ऐसा होना पड़ेगा, तब उत्तर मिलेगा ।

*

मैंने तुम्हें पहले ही संकेत किया था कि भागवत कृपा की प्रतीक्षा करने के योग्य होना (तामसिक भावना से नहीं अपितु सात्विक आस्था के साथ) तुम्हारे लिए सर्वोत्तम मार्ग है । प्रार्थना, हां — लेकिन तुरंत पूरा किये जाने का आग्रह करनेवाली प्रार्थना नहीं — बल्कि ऐसी प्रार्थना जो स्वयं ही है भगवान् के साथ मन और हृदय की घनिष्ठता, जो अपनी प्रसन्नता और संतुष्टि प्राप्त कर सके । अपने समय पर भगवान् द्वारा पूरा किये जाने का भरोसा करनेवाली प्रार्थना !

प्रार्थना की महत्ता, पृ.16 — श्रीअरविन्द

जितना तुम अपने आपको भगवान को दे देते हो उतना ही वे तुम्हारे साथ रहते हैं, पूर्ण रूप से, निरन्तर, हरेक क्षण, तुम्हारे सभी विचारों में, तुम्हारी सभी जरूरतों में, और तुम्हारी कोई ऐसी अभीप्सा नहीं होती जिसका तत्काल उत्तर नहीं दिया जाता । और तुम्हें एक सम्पूर्ण, सतत घनिष्ठता, समग्र निकटता का बोध होता है ।... मानों भगवान हर समय तुम्हारे साथ हैं । तुम चलते हो और वे तुम्हारे साथ चलते हैं । तुम सोते हो और वे तुम्हारे साथ सोते हैं । तुम खाते हो और वे तुम्हारे साथ खाते हैं । तुम सोचते हो और वे तुम्हारे साथ सोचते हैं । तुम प्रेम करते हो और वे तुम्हारा प्रेम बन जाते हैं ।

— श्रीमाँ

श्रीमाँ की प्रार्थनाएं

8 फरवरी 1913

हे प्रभो, तू मेरा आश्रय और मेरा वरदान है, मेरा बल, मेरा स्वास्थ्य, मेरी आशा और मेरा साहस है । तू ही परम शांति, अमिश्रित आनंद, पूर्ण स्वच्छता है । मेरी पूरी सत्ता असीम कृतज्ञता और अनंत पूजा में तेरे आगे साष्टांग दंडवत् है और वह पूजा मेरे हृदय और मेरे मन से तेरी ओर उसी तरह उठती है जैसे भारत की सुगंधित धूप का शुद्ध धुंआ ।

वर दे कि मैं मनुष्यों में तेरा अग्रदूत होऊं ताकि वे सब जो तैयार हैं उस आनंद का रस ले सकें जो तू मुझे अपनी अनंत करुणा में प्रदान करता है, वर दे कि तेरी शांति धरती पर राज्य करे ।

10 फरवरी 1913

वर दे कि तेरी महिमा घोषित हो,
वर दे कि जीवन उसके द्वारा पवित्र हो;
वर दे कि वह मनुष्यों के हृदयों को रूपांतरित करे,
वर दे कि तेरी शांति पृथ्वी पर राज्य करे ।

13 मार्च 1913

... वर दे कि पवित्रीकरण की शुद्ध सुगंध हमेशा जलती रहे, ऊंची और ऊंची, सीधी और सीधी उठती रहे, पूर्ण सत्ता की कभी न रुकनेवाली प्रार्थना की तरह जो तेरे साथ एक होने की इच्छा करती है ताकि वह तुझे अभिव्यक्त कर सके ।

13 दिसंबर 1913

हे प्रभो, मुझे अपना प्रकाश दे, वर दे कि मैं कोई भूल न करूं, वर दे कि मैं जिस अनंत आदर-सम्मान, जिस अत्यधिक भक्ति, जिस तीव्र और गंभीर प्रेम के

साथ तेरी ओर अभिमुख होती हूं वह प्रदीप्त करनेवाला, विश्वासोत्पादक और संक्रामक हो और सभी के हृदयों में जागे ।

हे प्रभो, शाश्वत स्वामी, तू मेरा प्रकाश और मेरी शांति है, मेरे चरणों को राह दिखा, मेरी आंखें खोल, मेरे हृदय को प्रबुद्ध कर और तेरी ओर सीधा ले जानेवाले मार्ग की ओर मुझे चला ।

हे प्रभो, वर दे कि तेरी इच्छा के सिवा मेरी कोई और इच्छा न हो और मेरे सभी कर्म तेरे दिव्य विधान की अभिव्यक्ति हों ।

एक महान् ज्योति मुझे परिप्लावित कर रही है और मैं तेरे सिवा और किसी चीज के बारे में सचेतन नहीं हूँ... ।

शांति, शांति, सारी भूमि पर शांति ।

16 दिसम्बर 1913

शुद्ध और निस्स्वार्थ प्रेम —— तेरा प्रेम जहांतक हम उसे देख या अभिव्यक्त कर सकते हैं —— वह एकमात्र चाबी है जो तुझे खोजनेवाले हृदयों को खोल सकती है । जो बुद्धि के मार्ग का अनुसरण करते हैं वे बहुत उच्च और सत्य धारणा बना सकते हैं, उन्हें सच्चे जीवन की पूरी जानकारी हो सकती है, ऐसे जीवन की जो तेरे साथ एक है लेकिन वे उसे जानते नहीं, उन्हें उस जीवन का कोई आंतरिक अनुभव नहीं होता, वे तेरे साथ समस्त संपर्क से अनभिज्ञ होते हैं । और जिनमें बौद्धिक ज्ञान होता है, जिन्होंने अपने-आपको एक ऐसी रचना में कर्म के लिए बंद कर रखा है जो उन्हें सर्वोत्तम प्रतीत होती है, उन्हें बदलना सबसे अधिक कठिन होता है; और किसी भी सद्भावनावाले व्यक्ति की अपेक्षा उनमें भागवत चेतना को जगाना सबसे अधिक कठिन होता है । केवल प्रेम ही यह चमत्कार सिद्ध कर सकता है क्योंकि प्रेम सभी दरवाजों को खोलता, सभी दीवारों को भेदता और सभी वाधाओं को पार कर जाता है और जरा-सा सच्चा प्रेम सुंदरतम भाषणों की अपेक्षा अधिक कार्य कर सकता है ।

हे प्रभो, वर दे कि मेरे अंदर सच्चे प्रेम का यह फूल खिले ताकि जो भी मेरे नजदीक आयें वे सब सुगंधित हो उठें और इसकी सुगंध उन्हें पवित्र बनाये ।

इस प्रेम में शांति और आनंद पाये जाते हैं जो समस्त बल और उपलब्धि के स्रोत हैं । यह अचूक चिकित्सक, परम सान्त्वना देनेवाला है; यह विजेता और

परम गुरु है ।

हे प्रभो, मेरे मधुर स्वामी, जिसकी मैं मौन होकर आराधना करती हूँ, जिसे मैं पूरी तरह समर्पित हूँ, जो मेरे जीवन पर शासन करता है, अपने शुद्ध प्रेम से मेरे हृदय को प्रज्ज्वलित कर ताकि वह उस ज्वलंत वेदी की तरह प्रज्ज्वलित हो जो सभी अपूर्णताओं को भस्म कर दे, जो अहंकार के मृत काष्ठ और अज्ञान के काले कोयले को सुखद ऊष्मा और कांतिमय प्रकाश में बदल दे ।

प्रभो, मैं तेरी ओर आनंदमय और साथ ही गंभीर भक्ति के साथ मुड़ती हूं और तुझसे अनुनय करती हूं:

वर दे कि तेरा प्रेम अभिव्यक्त हो,
वर दे कि तेरा राज्य आये ।
वर दे कि तेरी शांति जगत् पर राज्य करे ।

24 नवम्बर 1931

हे मेरे प्रभो, मेरे मधुर स्वामी, तेरे कार्य की परिपूर्ति के लिए मैंने जड़-पदार्थ की अथाह गहराइयों में डुबकी लगायी है, मैंने अपनी उंगली से मिथ्यात्व और निश्चेतना की विभीषिका को छुआ है, मैं विस्मृति और चरम अंधकार के आसन तक जा पहुंची । परंतु मेरे हृदय में परम स्मृति थी, मेरे हृदय से ऐसी पुकार उठी जो तेरे पास तक पहुंच सकती थी : "प्रभो, प्रभो, हर जगह तेरे शत्रु विजयी होते दीखते हैं, मिथ्यात्व जगत् का राजा है; तेरे बिना जीवन मृत्यु है, सतत नरक है; संदेह ने आशा का स्थान झड़प लिया है और विद्रोह ने समर्पण को धकेल दिया, श्रद्धा चुक गयी है, कृतज्ञता का जन्म तक नहीं हुआ; अंध आवेशों, हत्यारी वृत्तियों और अपराधी दुर्बलता ने तेरे प्रेम के मधुर विधान को ढक दिया और उसका गला घोंट दिया है । प्रभो, क्या तू अपने शत्रुओं को प्रभावी होने देगा, मिथ्यात्व, कुरूपता और दुःख को जीतने देगा ? प्रभो, विजय के लिए आज्ञा दे और विजय हो जायेगी । मैं जानती हूँ कि हम अयोग्य हैं, मैं जानती हूं कि जगत् अभी तक तैयार नहीं है । लेकिन तेरी कृपा पर पूर्ण श्रद्धा के साथ मैं तुझे पुकारती हूं और मैं जानती हूं कि तेरी कृपा रक्षा करेगी ।"

इस भांति मेरी प्रार्थना तेरी ओर ऊपर को दौड़ पड़ी; और रसातल की

गहराइयों में से मैंने तुझे तेरी चमकती हुई भव्यता में देखा; तू प्रकट हुआ, और मुझसे बोला : "साहस न खो, दृढ़ बन, विश्वास रख — **मैं आ रहा हूं ।"**

23 अक्तूबर 1937

(उन लोगों के लिए एक प्रार्थना जो भगवान् की सेवा करना चाहते हैं ।)

हे प्रभो ! हे सर्वविघ्नविनाशक ! तेरी जय हो !

वर दे कि हमारे अंदर की कोई भी चीज तेरे कार्य में बाधक न हो ।

वर दे कि कोई भी चीज तेरी अभिव्यक्ति में रुकावट न डाले ।

वर दे कि हर वस्तु में तथा प्रत्येक क्षण तेरी ही इच्छा पूर्ण हो ।

हम यहाँ तेरे सम्मुख उपस्थित हैं ताकि हमारे अंदर, हमारी सत्ता के अंग-प्रत्यंग में, उसके प्रत्येक कार्य में, उसकी सर्वोच्च ऊंचाइयों से लेकर शरीर के क्षुद्रतम कोषों तक में तेरी ही इच्छा कार्यान्वित हो ।

ऐसी कृपा कर कि हम तेरे प्रति संपूर्ण रूप से और सदा के लिए एकनिष्ठ बन सकें ।

हम अन्य सब प्रभावों से अलग रहते हुए पूरी तरह तेरे ही प्रभाव के अधीन हो जाना चाहते हैं ।

वर दे कि हम तेरे प्रति एक गंभीर और तीव्र कृतज्ञता रखना कभी न भूलें ।

कृपा कर कि प्रत्येक क्षण हमें जो अद्‌भुत वस्तुएं तेरी देन के रूप में मिलती हैं, उनमें से किसी का भी कभी अपव्यय न करें ।

ऐसा वर दे कि हमारे अंदर की प्रत्येक चीज तेरे कार्य में सहयोग दे और सब कुछ तेरी सिद्धि के लिए तैयार हो जाये ।

तेरी जय हो, हे परमेश्वर ! हे समस्त सिद्धियों के अधीश्वर !

तू हमें अपनी विजय में सक्रिय और ज्वलंत, अखंड और अचल-अटल विश्वास प्रदान कर ।

(श्रीमातृवाणी : प्रार्थना और ध्यान) — श्रीमाँ

रोगमुक्ति के लिए प्रार्थना के बारे में

घबराने तथा संघर्ष करने के बदले सर्वोत्तम चीज है सच्ची प्रार्थना के साथ शरीर को भगवान को समर्पित कर
देना — "आप का संकल्प पूरा हो ।" यदि स्वस्थ होने की कुछ भी सम्भावना हुई तब इसके लिए यह सर्वोत्तम परिस्थिति स्थापित कर देगी । और यदि रोग मुक्ति असम्भव है तब यह शरीर से मुक्त होने के लिए तथा मृत्यु उपरान्त जीवन के लिए सबसे अच्छी तैयारी होगी । स्नेह तथा आशीर्वाद के साथ ।

CWM Vol. 15 : p. 149 — श्रीमाँ

प्रार्थना में कठिनाई

प्रश्न : मैं ध्यान के लिए बैठता हूँ और उत्साह तथा उत्कटता के साथ प्रार्थना करता हूँ । मेरी अभीप्सा तीव्र होती है तथा प्रार्थना भक्ति से ओत-प्रोत रहती है । कुछ दिनों के बाद अभीप्सा यान्त्रिक और प्रार्थना शाब्दिक मात्र रह जाती है । क्या करना चाहिये ?

उत्तर : सब के साथ ऐसा ही होता है । मैंने यह अनेक बार कहा है कि जो लोग हर रोज घण्टों तक ध्यान करते हैं और दिन भर प्रार्थना करते रहते हैं, वे, मैं निश्चित रूप से कह सकती हूँ कि तीन चौथाई समय यन्त्रवत् करते हैं यानी उसमें सच्चाई नहीं होती, क्योंकि मनुष्य की प्रकृति तथा मनुष्य का मन उस प्रकार नहीं बना है ।

एकाग्रता तथा ध्यान के लिए तुम्हें पहले अभ्यास करना होगा जिसे एकाग्रता का "मानसिक बाहुबल निर्माण" कहा जा सकता है । तुम्हें सचमुच प्रयास करना होगा जिस प्रकार भारोत्तोलन के लिए मांसपेशियों को मजबूत बनाने का प्रयास करते हो, यदि तुम एकाग्रता को सचमुच दृढ़ बनाना चाहते हो ।

वही चीज प्रार्थना के साथ है । अचानक एक अग्निशिखा प्रज्वलित हो जाती है । तुम्हारे अन्दर एक उत्साह भर जाता है, एक भक्ति उमड़ पड़ती है और उन्हें तुम शब्दों में सहज भाव से व्यक्त करते हो, यदि वे सच्चे हों । इसे सीधे हृदय

से आना चाहिये मस्तिष्क से होकर नहीं । तब यह प्रार्थना होती है । यदि ये शब्द मात्र हैं जो दिमाग में रेलपेल करते हैं तब यह प्रार्थना नहीं है । अब, यदि अग्निशिखा में इन्धन न डालो तब कुछ समय के बाद यह बुझ जायेगी ।...

यदि मानसिक तनाव के प्रभाव को सन्तुलित करने के लिए, उदाहरणार्थ कुछ व्यायाम करना तुम्हारे लिए सम्भव न हो, तब तुम कुछ पढ़ना शुरू कर सकते हो अथवा जो तुम्हारे साथ हुआ है उसे लिख सकते हो, तुम अपने को अभिव्यक्त कर सकते हो । इससे विश्रांति, आवश्यक विश्रांति आती है । किन्तु ध्यान की अवधि का केवल सापेक्ष महत्व है । अवधि की लम्बाई से इस गतिविधि में तुम्हारी आदत की मात्रा का केवल पता चलता है ।

निस्सन्देह, यह और अधिक बढ़ सकता है, परन्तु हमेशा एक सीमा होती है और सीमा पर पहुँचते ही तुम्हें रुक जाना पड़ेगा, बस ! यह सच्चाई की कमी नहीं बल्कि क्षमता की कमी है । सच्चाई की कमी तब होती है जब तुम ध्यान करने का ढोंग करते हो लेकिन ध्यान या प्रार्थना सचमुच नहीं करते जैसा कि बहुत लोग मन्दिर या गिरजा घर में करते हैं जो अनुष्ठान के साथ अपनी प्रार्थना दोहराते हैं जिस प्रकार कोई सीखे हुए पाठ की आवृति करता है । तब यह न प्रार्थना है न ध्यान । यह मात्र पेशा है । यह रोचक नहीं है ।

CWM vol.8 : p.227 — श्रीमाँ

हमारी सतत प्रार्थना है कि हम भागवत संकल्प को समझें तथा तदनुसार जीवन-यापन करें ।

CWM vol.14 — श्रीमाँ

हे भागवती माता, हम सब की यह प्रार्थना है :
स्वीकार कर कि हम सब सदा तेरे आज्ञाकारी तथा सच्चे सैनिक बनें । स्वीकार कर कि तेरी शक्ति हमें विरोधी शक्तियों से सामना करने तथा तेरी विजय अर्जित करने में समर्थ बनाये ।

श्रीमाँ की जय हो !

हमेशा निष्ठावान और दृढ़प्रतिज्ञ बने रहो और तुम्हें सिद्धि का तुम्हारा अपना हिस्सा मिल जायेगा ।

CWM vol.12 — श्रीमाँ

6 अगस्त 1958

सामूहिक प्रार्थना

प्रश्न : मधुर माँ, सामूहिक प्रार्थना का प्रभाव तथा महत्व क्या है ?

उत्तर : हमलोगों ने इसके बारे में, सामूहिक प्रार्थनाओं तथा इनके प्रयोग के बारे में पहले ही बातचीत की है । मुझे विश्वास है कि बुलेटिन में यह प्रकाशित भी किया गया है ।

फिर भी, सामूहिक प्रार्थना के भिन्न-भिन्न प्रकार हैं, ठीक वैसे ही जैसे समूहों के भिन्न-भिन्न प्रकार होते हैं । एक गुमनाम समूह होता है भीड़ का जो संयोगवश परिस्थितियों द्वारा बिना किसी आन्तरिक समन्वय के निर्मित हो जाता है । उदाहरण के लिए, जब कोई राजा या लोगों का ध्यान आकर्षित करने वाला कोई व्यक्ति संकट में पड़ जाये, वह बीमार हो अथवा दुर्घटनाग्रस्त हो गया हो और उसकी खबर जानने तथा अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए भी लोग एकत्र हो जायें, तब संयोगवश परिस्थितियों के कारण लोग वहाँ एकत्र हो गये । इनमें भावना अथवा रुचि या उत्सुकता के अतिरिक्त कोई आन्तरिक कड़ी नहीं है । ऐसे उदाहरण देखे गये हैं जब भीड़ के लोग सहज भाव से उस व्यक्ति के स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रार्थना करने लगते हैं जिसमें उनकी विशेष दिलचस्पी होती है । ऐसी भीड़ अन्य उद्देश्य के लिए भी एकत्र हो सकती है, घृणा के वशीभूत होकर और उनकी चीख-पुकार भी विरोधी तथा विध्वंसकारी शक्तियों के प्रति एक प्रकार से प्रार्थना ही होती है ।

ये गतिविधियाँ अचानक और असंगठित तथा स्वाभाविक रूप से होती हैं ।

कुछ ऐसे व्यक्तियों का भी समूह होता है जो किसी समान आदर्श या शिक्षा या कार्य के निष्पादन के प्रयोजन से एक साथ एकत्र होते हैं । उनके बीच संगठनात्मक कड़ी होती है, समान उद्देश्य की कड़ी, समान संकल्प और विश्वास की कड़ी जो उन्हें एक साथ मिलाती है । ये विधिवत् एकत्र होकर एक साथ मिलकर प्रार्थना और ध्यान कर सकते हैं । यदि उनका लक्ष्य ऊँचा है, उनका संगठन उत्तम है, उनका आदर्श शक्तिशाली है तब ऐसा समूह अपनी प्रार्थना और ध्यान द्वारा विश्व की घटनाओं पर या अपनी आन्तरिक तथा सामूहिक प्रगति पर यथेष्ट प्रभाव डाल सकता है । ऐसे समूह अन्य समूहों की अपेक्षा निश्चित ही श्रेष्ठतर होते हैं परन्तु इनमें भीड़ की अन्ध शक्ति, सामूहिक क्रियाशीलता का अभाव होता है । इनके स्थान पर उनमें स्वैच्छिक तथा सचेतन संगठन होता है ।

***

आश्रम स्कूल छात्रालय के लिए सन्देश
दोरत्वा बोर्डिंग के बच्चों को दी गई प्रार्थना

हम सब अपनी दिव्य श्रीमाँ के सच्चे बच्चे बनना चाहते हैं ।
किन्तु मधुर माँ, इसके लिए हमें धैर्य तथा साहस, आज्ञाकारिता, सदेच्छा, उदारता तथा निःस्वार्थता, और सभी आवश्यक सद्गुण देने की कृपा करना ।
यही हम सब की प्रार्थना तथा अभीप्सा है ।

CWM : Vol.12 — श्रीमाँ

सच तो यह है कि यदि तुम पूर्णतया सच्ची अभीप्सा या इस पर्याप्त उत्कट प्रार्थना का एक क्षण — एक लघु क्षण मात्र — जी लो तो घंटों ध्यान करने से कहीं अधिक बातें जान लोगे ।

— श्रीमाँ

प्रार्थना तथा अभीप्सा

प्रश्न : क्या प्रार्थनाएं एवं अभीप्साएं भी विचारों के समान रूप ग्रहण करती हैं ?

उत्तर : हाँ, कभी-कभी वे उस व्यक्ति का रूप भी ग्रहण करती हैं जिसकी अभीप्सा होती है या जो प्रार्थना करता है — प्रायः । यह निर्भर करता है । अभीप्साएं कभी-कभी उस चीज का रूप ले लेती हैं जिसकी अभीप्सा की जाती है, किन्तु अधिकतर और विशेष रूप से प्रार्थनाएं प्रार्थना करने वाले का रूप ग्रहण कर लेती हैं ।

प्रश्न : प्रार्थना तथा अभीप्सा में अन्तर क्या है ?

उत्तर : मैंने यह कहीं पर लिखा है । प्रार्थना के अनेक प्रकार हैं ।
एक बिलकुल यान्त्रिक, भौतिक प्रार्थना होती है रटे हुए शब्दों के साथ और वे यन्त्रवत् दोहराये जाते हैं । इसका अधिक महत्व नहीं होता । और इसका एक मात्र प्रभाव यह होता है कि प्रार्थना करनेवाला अचंचल हो जाता है, क्योंकि प्रार्थना की बार-बार आवृति से तुम्हारा मन स्थिर हो जाता है ।

एक प्रार्थना होती है जो व्यक्ति की मांग को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करती है । व्यक्ति एक चीज या दूसरी चीज के लिए प्रार्थना करता है । व्यक्ति अपने लिए, किसी और व्यक्ति के लिए, किसी परिस्थिति के लिए प्रार्थना कर सकता है ।
एक ऐसा बिन्दु होता है जहाँ अभीप्सा तथा प्रार्थना मिल जाती हैं, क्योंकि कुछ ऐसी प्रार्थनाएं होती हैं जो जीवन्त अनुभूतियों का सूत्रीकरण होती हैं : ये सत्ता के अन्तस्तल से बिलकुल तैयार गहरे अनुभव की अभिव्यक्ति के समान प्रकट होती हैं और जो या तो अनुभूति के लिए धन्यवाद ज्ञापन के रूप में या अनुभूति के सातत्य के लिए निवेदन के रूप में अथवा इसकी व्याख्या की मांग के रूप में व्यक्त होती हैं और यह सचमुच अभीप्सा के बिलकुल निकट है । परन्तु यह आवश्यक नहीं कि अभीप्सा शब्दों में सूत्रबद्ध हो; या यदि शब्दों में सूत्रित है तब यह करीब-करीब

आह्वान बन जाता है । तुम किसी अवस्था या स्थिति के लिए अभीप्सा करते हो । उदाहरणार्थ, तुमने अपने अन्दर कुछ ऐसी चीज देखी है जो तुम्हारे आदर्श के अनुकूल नहीं है, एक गति या क्रिया अन्धकार या अज्ञान की, जो तुम्हारे लक्ष्य के साथ सुसंगत नहीं है तब वह शब्दों में सूत्रबद्ध नहीं होगा । वह उठती हुई एक अग्निशिखा और जीवन्त अनुभूति के समर्पण के समान होगा जिसमें इसे और विशालतर बनाने और अधिक स्पष्ट करने की मांग होगी । इस सब को बाद में शब्दबद्ध किया जा सकता है यदि व्यक्ति अपने अनुभव को याद करके लिखने का प्रयास करे । परन्तु अभीप्सा हमेशा अग्निशिखा के समान अचानक फूट पड़ती है और ऊँचा ऊपर की ओर उठती है । इसके अन्दर कामना होती है कि व्यक्ति क्या बनना चाहता है, क्या करना चाहता है, क्या पाना चाहता है । मैंने यहाँ "कामना" शब्द का प्रयोग किया है परन्तु वास्तव में यहाँ "अभीप्सा" का प्रयोग होना चाहिये क्योंकि उसमें न कामना का रूप है न कामना की विशेषता ।

यह वास्तव में संकल्प की एक बड़ी शोधक ज्वाला जैसी होती है और अपने केन्द्र में सिद्ध करने की चीज को वहन करती है ।

उदाहरण के लिए, यदि तुमने कुछ ऐसा कार्य किया है जिसके लिए तुम्हें पश्चाताप है और यदि इसका फल दुःखद होगा और चीजों को अस्त-व्यस्त कर देगा तथा इसमें अन्य अनेक लोग उलझे हुए हैं जिनकी प्रतिक्रिया अज्ञात् है, परन्तु तुम स्वयं यह चाहते हो कि जो कुछ हो चुका है उससे सर्वोत्तम परिणाम निकले । यदि यह भूल है तो इसे समझा जाये और भूल चाहे कैसी भी हो फिर भी यह तुम्हारे लिए एक महत्तर प्रगति के लिए, एक महत्तर अनुशासन के लिए, भगवान की ओर आरोहण के लिए एक अवसर हो सकता है । भविष्य के लिए एक द्वार हो सकता है जब तुम अधिक, अधिक स्पष्ट, सच्चे तथा तीव्र होना चाहोगे । इस प्रकार यह सब यहाँ (हृदय की ओर संकेत करते हुए) एक शक्ति की तरह एकत्र हो जाती है और तब उमड़ती हुए ऊपर की ओर आरोहण की तीव्र गति में उठती है और कभी-कभी शब्दों में सूत्रता की छाया तक नहीं होती, कोई अभिव्यक्ति नहीं होती बल्कि एक उछलती ज्वाला की तरह उठती जाती है ।

वह सचमुच सच्ची अभीप्सा है । यह हरेक दिन सैकड़ों, हजारों बार हो

सकती है यदि व्यक्ति ऐसी चेतना की अवस्था में हो जिसमें वह निरन्तर प्रगति करना चाहे तथा भागवत संकल्प जो हमसे अपेक्षा करता है उसके प्रति अधिक सच्चा तथा सुसंगत बना रहे ।

प्रार्थना कहीं अधिक बाह्य वस्तु है, प्रायः एक सुनिश्चित तथ्य से सम्बन्धित और हमेशा सूत्रबद्ध क्योंकि सूत्र ही तो प्रार्थना है । व्यक्ति अभीप्सा कर सकता है और उसे प्रार्थना में बदल सकता है । किन्तु अभीप्सा हर तरह से प्रार्थना से कहीं अधिक आगे व परे होती है । यह भगवान से अधिक निकट तथा अधिक निःस्वार्थ होती है तथा अभीप्सा की वस्तु में ही सदा रमी रहती है और व्यक्ति जो कुछ करना चाहता है उसे भगवान को समर्पित कर देती है । तुम कुछ मांगने के लिए प्रार्थना कर सकते हो, तुम भगवान प्रदत्त वस्तु के लिए उन्हें धन्यवाद देने के लिए भी प्रार्थना कर सकते हो और वह प्रार्थना कहीं अधिक महान है । इसे धन्यवाद ज्ञापन भी कह सकते हैं । भगवान की कृपा के लिए जो उन्होंने तुम्हारे लिए किया है, जो तुम उनके अन्दर देखते हो तथा जो प्रशंसा उन्हें अर्पित करना चाहते हो, उस सब के लिए कृतज्ञता प्रकट करने हेतु प्रार्थना कर सकते हो । यह सब एक प्रार्थना का रूप ले सकता है । निश्चित रूप से यह उच्चतम प्रार्थना है, क्योंकि यह एकनिष्ठ रूप से अपने आप के साथ तन्मय नहीं है । यह अहंकारमूलक प्रार्थना नहीं है ।

निश्चय ही कोई व्यक्ति सभी क्षेत्रों में अभीप्सा रख सकता है, किन्तु अभीप्सा का मुख्य केन्द्र चैत्यपुरुष है जब कि व्यक्ति सभी क्षेत्रों में प्रार्थना कर सकता है तथा प्रार्थना जिस क्षेत्र में की जाती है उसी क्षेत्र से सम्बन्धित होती है । व्यक्ति बिलकुल सांसारिक, भौतिक, प्राणिक, मानसिक प्रार्थना कर सकता है, चैत्य और आध्यात्मिक प्रार्थना कर सकता है तथा प्रत्येक का एक विशिष्ट लक्षण, एक विशिष्ट महत्व होता है ।

एक ऐसी प्रार्थना होती है जो एक साथ ही सहज तथा निःस्वार्थ होती है, एक आह्वान के समान जो प्रायः अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं होती, बल्कि ऐसी चीज की तरह जिसे हम भगवान के साथ मध्यस्थता कह सकते हैं । यह अत्यन्त शक्तिशाली होती है । मेरे पास ऐसी चीजों के अनगिनत उदाहरण हैं जो इसी प्रकार की प्रार्थनाओं के कारण लगभग तत्काल सिद्ध हो गईं । इसके लिए आवश्यकता

होती है एक गहरी श्रद्धा, उत्कटता, एक बड़ी सच्चाई की तथा हृदय की अत्यन्त सरलता की भी जो हिसाब-किताब न लगाये, योजना न बनाये, मोल-तोल न करे, बदले में कुछ पाने का न सोचे । क्योंकि अधिकांशतः लोग एक हाथ से देकर बदले में कुछ लेने के लिए दूसरा हाथ फैला देते हैं । अधिकतर प्रार्थनाएं वैसी ही होती हैं । परन्तु वैसी प्रार्थनाएं मैंने जिनकी चर्चा की है, धन्यवाद-ज्ञापन की क्रियाएं, एक प्रकार से भजन होती हैं और ये बहुत अच्छी होती हैं ।...

अधिक स्पष्ट करने के लिए हम कह सकते हैं कि प्रार्थना हमेशा शब्दों में सूत्रबद्ध होती है । परन्तु शब्दों के, उस चेतना की अवस्था के अनुसार जिसमें वे सूत्रबद्ध किये जाते हैं अलग-अलग मूल्य हो सकते हैं । प्रार्थना एक सूत्रबद्ध वस्तु होती है तथा व्यक्ति अभीप्सा कर सकता है । परन्तु किसी को सम्बोधित किये बिना प्रार्थना करना कठिन है । उदाहरण के लिए, कुछ लोगों ने एक ऐसे विश्व की धारणा बना ली है जिसमें से अल्पाधिक मात्रा में भगवान की धारणा को बहिष्कृत कर दिया है । (ऐसे बहुत लोग हैं । ऐसी धारणा कि कोई ऐसी शक्ति है जो सबकुछ जानती है, सबकुछ कर सकती है, जो अनन्त रूप से उनसे महान है और अतुलनीय है, उन्हें, उनके आत्म-सम्मान को कष्ट देती है । इसलिए वे ऐसी दुनिया बनाने की कोशिश करते हैं जिसमें भगवान न हो ।) ये लोग, स्पष्ट है, कि प्रार्थना नहीं कर सकते हैं, क्योंकि वे किससे प्रार्थना करेंगे ? जब तक वे अपने आप से प्रार्थना न करें जो कि प्रचलन में नहीं है । परन्तु व्यक्ति भगवान में श्रद्धा के बिना भी किसी चीज के लिए अभीप्सा कर सकता है । कुछ लोग ऐसे हैं जो भगवान के अस्तित्व में आस्था नहीं रखते किन्तु प्रगति में विश्वास करते हैं । उनका विचार है कि विश्व सतत विकास कर रहा है और यह विकास अनन्त रूप से बिना रुके सर्वदा महत्तर शुभ की ओर होता रहेगा । ऐसे लोगों में विकास के लिए बड़ी अभीप्सा हो सकती है और उन्हें इसके लिए भगवान के अस्तित्व की धारणा की जरूरत नहीं है । अभीप्सा में श्रद्धा आवश्यक रूप से निहित है किन्तु आवश्यक नहीं है कि वह भगवान के अस्तित्व में हो, जबकि प्रार्थना, जब तक किसी भागवत सत्ता को सम्बोधित न किया जाये, मूल्यहीन है । और प्रार्थना किसको ? व्यक्ति किसी ऐसी चीज से प्रार्थना नहीं करता जिसका कोई व्यक्तित्व नहीं होता । व्यक्ति उसी से प्रार्थना करता है जो प्रार्थना को सुन

सके । यदि हमलोगों को सुननेवाला कोई न हो तब हम कैसे प्रार्थना कर सकते हैं ? इसलिए यदि कोई प्रार्थना करता है तब इसका अर्थ होता है कि उसे ऐसे व्यक्तित्व में विश्वास है जो अनन्त रूप से उससे महान है, शक्तिशाली है, वह हमारी नियति को बदल सकता है और हमें भी बदल सकता है यदि वह ऐसी प्रार्थना करे । यह है दोनों में तात्विक अन्तर ।

इसलिए अधिकांश बौद्धिक लोग अभीप्सा को स्वीकार करते हैं और कहते हैं कि प्रार्थना निम्न कोटि की चीज है । योगी या गूढ़वादी कहेंगे कि अभीप्सा तो ठीक है किन्तु यदि तुम चाहते हो कि कोई सचमुच तुम्हारी बात सुने, भगवान ध्यान दें तब तुम्हें प्रार्थना करनी होगी, एक बच्चे की सम्पूर्ण सरलता और विश्वास के साथ तुम्हें उनसे मांग करनी होगी । "मुझे इसकी या उस चीज की आवश्यकता है (चाहे यह नैतिक या भौतिक या सांसारिक आवश्यकता हो), ठीक है, मैं मांगता हूँ, मुझे दो" या "तुमने दिया है जो मैंने मांगा । तुमने मुझे ठोस रूप से वे अनुभूतियाँ दी हैं जो मेरे लिए अज्ञात थीं और अब मैं इच्छानुसार उन चमत्कारों को उपलब्ध कर सकता हूँ । मैं तुम्हारा असीम रूप से कृतज्ञ हूँ और तुम्हारे प्रति धन्यवाद ज्ञापन की प्रार्थना तेरी महिमा के गीत स्वरूप तुम्हें अर्पित करता हूँ । तेरे हस्तक्षेप के लिए धन्यवाद" । अभीप्सा करने के लिए अभीप्सा को किसी के प्रति निर्देशित करने की आवश्यकता नहीं होती । व्यक्ति में सत्ता की किसी अवस्था के लिए, ज्ञान के लिए, चेतना की एक अवस्था की सिद्धि के लिए अभीप्सा हो सकती है । व्यक्ति किसी चीज के लिए अभीप्सा करता है किन्तु यह अवश्य ही प्रार्थना नहीं है । प्रार्थना कुछ और है ।

प्रार्थना व्यक्तिगत वस्तु है, एक व्यक्तिगत सत्ता को, एक शक्ति को या एक व्यक्तित्व को सम्बोधित किया जाता है जो तुम्हारी बात को सुन सके और उत्तर दे सके । अन्यथा तुम कुछ मांग नहीं सकते । समझते हो न ?

CWM : vol.5, pp.141-145 — श्रीमाँ

सर्वोत्तम हमेशा उन्हीं के साथ होता है जो अपना समस्त विश्वास भगवान और केवल भगवान पर ही रखते हैं ।

— श्रीमाँ

शरीर के कोषाणुओं की प्रार्थना

अब जब कि कृपा के प्रभाव से हम सब धीरे-धीरे निश्चेतना से निकल रहे हैं और सचेतन जीवन के प्रति जाग्रत हो रहे हैं, हमारे अन्दर एक उत्कट प्रार्थना अधिक ज्योति, अधिक चेतना के लिए उठती है ।

हे जगत के परम प्रभु, हम आप से याचना करते हैं, हमें धरती पर आप के दिव्य यंत्र बनने के लिए आवश्यक शक्ति तथा सौन्दर्य तथा सामंजस्यपूर्ण पूर्णता प्रदान कीजिये ।

CWM : vol. 12, p. 282 — श्रीमाँ
2 दिसम्बर 1967

प्रार्थना तथा भगवान का आह्वान

हमारा समस्त जीवन भगवान को समर्पित एक प्रार्थना होनी चाहिये ।

समग्र प्रार्थना : समस्त सत्ता भगवान को अर्पित एक मात्र प्रार्थना में केन्द्रित है ।

नींद से जाग्रत होने पर कुछ क्षणों के लिए अचंचल रहो और आगामी दिन को भगवान को अर्पित कर दो और यह प्रार्थना करो कि तुम उन्हें सदा और सभी परिस्थितियों में स्मरण करते रहोगे ।

सोने से पूर्व कुछ क्षणों के लिए एकाग्र हो जाओ, बीते हुए दिन की घटनाओं पर नजर डालो, याद करो कहाँ तुमने भगवान को विस्मृत कर दिया और प्रार्थना करो कि ऐसी विस्मृति पुनः कभी न हो ।

CWM v.15, p.207 — श्रीमाँ
31 अगस्त 1953

प्रत्येक दिन प्रातःकाल जाग्रत होने पर पूर्ण निवेदित दिन के लिए हमें प्रार्थना करनी चाहिये ।

19 जून 1954

हमें पूरे दिल से यह प्रार्थना करनी चाहिये कि भागवत कर्म निष्पादित हो ।

सभी सच्ची प्रार्थनाएं स्वीकृत की जाती हैं, किन्तु भौतिक स्तर पर सिद्धि में कुछ समय लग सकता है ।

28 जून 1954

सभी सच्ची प्रार्थनाएं स्वीकृत की जाती हैं, प्रत्येक पुकार का उत्तर दिया जाता है ।

21 जुलाई 1954

हमें अभीप्सा की सतत अवस्था में रहना चाहिये, किन्तु जब हम अभीप्सा नहीं कर सकते तब हमें एक बालक की सरलता के साथ प्रार्थना करनी चाहिये ।

25 जुलाई 1954

हम प्रार्थना करते हैं कि भगवान हमें सर्वदा अधिक शिक्षा देते रहें, अधिकाधिक प्रबोधित करते रहें, हमारे अज्ञान को दूर करें, हमारे मन को ज्योतिर्मय करें ।

2 नवम्बर 1954

भगवान की कृपा को सम्बोधित प्रबल तथा सच्ची प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती ।

19 दिसम्बर 1954

परम सत्ता दिव्य ज्ञान तथा पूर्ण एकत्व है । दिन के प्रत्येक क्षण में हम उन्हें पुकारें जिससे हम उनके अलावा कुछ और न रह सकें यानी हम वही बन जायें ।

20 दिसम्बर 1954

जब निराशा में हम भगवान को पुकारते हैं, तब वे हमेशा हमारी पुकार का उत्तर देते हैं ।

21 दिसम्बर 1954

हम अपनी कृतज्ञता की प्रबल ज्वाला तथा अपनी आनन्दपूर्ण व पूर्ण विश्वास युक्त निष्ठा को स्वीकार करने के लिए प्रार्थना करते हैं ।

27 दिसम्बर 1954

प्रश्नः श्रीअरविन्द एक पत्र में लिखते हैं : "समुचित रूप से समर्पित समस्त प्रार्थना भगवान के साथ अधिक घनिष्ठ सम्पर्क में लाती है और उनके साथ समुचित सम्बन्ध स्थापित करती है ।" इस पत्र में "समुचित रूप से समर्पित" से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर : विनम्रता तथा निष्कपटता के साथ । कहना न होगा कि तोल-मोल की भावना से प्रार्थना की समस्त महत्ता नष्ट हो जाती है ।

CWM Vol.15 : pp. 207-09 — श्रीमाँ

कृपा और प्रार्थना

मैंने पहले ही तुम्हें संकेत दिया था कि भागवत कृपा की प्रतीक्षा करने में (तामसिक भावना से नहीं बल्कि सात्विक आस्था के साथ) समर्थ बनना तुम्हारे लिए सर्वोत्तम मार्ग था । प्रार्थना, हाँ — किन्तु तत्काल परिणाम पर आग्रह करने वाली प्रार्थना नहीं, बल्कि ऐसी प्रार्थना जो स्वयं मन और हृदय का भगवान के साथ सम्पर्क बन जाये तथा भगवान द्वारा उनके अपने समय पर दिये जानेवाले परिणाम पर विश्वास करके आनन्दित और सन्तुष्ट रहे । ध्यान ? हाँ, किन्तु तुम्हारा ध्यान गलत आसन में भटक गया है यानी एक उत्सुक तथा भीषण पहलवानी की दिशा में जहाँ तुम्हें कटु निराशा मिलती है । इस तरह करते रहने का कोई लाभ नहीं । अच्छा होगा इसे

स्थगित कर देना जब तक नया आसन न मिल जाये । (मैं 'आसन' की चर्चा उन प्राचीन ऋषियों के सन्दर्भ में कर रहा हूँ जो एक स्थान पर एक निश्चित मुद्रा में तब तक शान्त होकर बैठ जाते थे जब तक सिद्धि नहीं मिलती थी । किन्तु उस आसन पर बैठने के बाद यदि विरोधी शक्तियों, असुरों, अप्सराओं द्वारा उन्हें तंग किया जाता तब वे उस आसन को छोड़ कर नये स्थान पर चले जाते थे ।) इसके अतिरिक्त तुम्हारे ध्यान में अचंचलता का अभाव है । तुम प्रयत्नशील मन द्वारा ध्यान करते हो । किन्तु अचंचल मन में ही अनुभूति आती है, सभी योगी यही कहते हैं । शान्त जल में ही सूर्य का सही प्रतिबिम्ब दिखाई देता है । आत्मा का सोमरस पाने के लिए प्याले को खाली करना पड़ता है । मन को और हृदय को तैयार करते रहो । जब ये सब तैयार हो जायेंगे तब चीजें उनमें सहज रूप से प्रवाहित होने लगेंगी ।

SABCL 24, Transformation of Vital — श्रीअरविन्द

***

जहाँ तक प्रार्थना का प्रश्न है, प्रार्थना का तथ्य तथा इसके साथ जो मनोवृति आती है, दूसरों के लिए निःस्वार्थ प्रार्थना स्वयं तुम्हें उच्च शक्ति की ओर उद्‌घाटित कर देती है, हालांकि जिसके लिए प्रार्थना करते हो उसमें तदनुरूप परिणाम होना आवश्यक नहीं है । इस सम्बन्ध में सकारात्मक रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि परिणाम इस बात पर निर्भर करेगा कि जिनके लिए प्रार्थना की जाती है वे कितने उद्‌घाटित या ग्रहणशील हैं या क्या उनमें कुछ चीज ऐसी है जो प्रार्थना द्वारा लाई गई शक्ति का प्रत्युत्तर दे सके ।

SA: Letters on Yoga, vol.23 — श्रीअरविन्द

***

वास्तव में जब तुम चाहते हो कि कोई कुछ दे तो तुम उससे मांगेत हो । क्या नहीं मांगते ? फिर भगवान से क्यों आशा करते हो कि वे तुम्हारे मांगे बिना ही तुम्हें दे देंगे ?

— श्रीमाँ

अतिमानस और प्रार्थना

कुछ लोग समझते हैं कि अधिमानस तथा अतिमानस में प्रार्थना अथवा अभीप्सा की आवश्यकता नहीं है । वे भूल गये होंगे कि हमलोगों की श्रीमाँ ने निरन्तर अभीप्सा की है, दिन-रात अथवा जब वह अपना संगीत बजाती हैं तब हम सब अनुभव करते हैं कि वह प्रार्थना कर रही हैं ।

हाँ, यह सब बिलकुल सच है । श्रीमाँ के संगीत में प्रार्थना या आह्वान ही होता है ।

SA: The Mother with letter on the Mother. — श्रीअरविन्द

***

प्रार्थना यंत्र नहीं है

प्रार्थना के सम्बन्ध में कोई सुनिश्चित नियम नहीं बनाया जा सकता । कुछ प्रार्थनाएं सुनी जाती हैं, उनके उत्तर दिये जाते हैं, परन्तु सब प्रार्थनाएं नहीं सुनी जातीं । उदाहरण ? मेरे मेशो के. के. मित्रा, संजीबनी के सम्पादक, की सबसे बड़ी बेटी को सब प्रकार की दवा देने के बाद डॉक्टर्स निराश हो गये । उसके पिता ने कहा, "अब केवल भगवान पर भरोसा है, हम सब प्रार्थना करें ।" उन्होंने प्रार्थना की । और उसी क्षण से उनकी बेटी स्वस्थ होने लगी । टॉयफड का बुखार तथा उसके सभी लक्षण गायब हो गये । मौत भी । मैं ऐसे कितने ही उदाहरण जानता हूँ । तब तुम पूछोगे कि सभी प्रार्थनाएं क्यों नहीं सुनी जानी चाहिये ? परन्तु वे क्यों सुनी जायें ? यह कोई यन्त्र नहीं है — प्रार्थना को यन्त्र के खांचे में डाल दो और अपनी मांग को पूरी कर लो । इसके अतिरिक्त मनुष्य जाति एक ही समय परस्पर विरोधी चीजों के लिए मांग करती है । यदि सभी मांगों की भगवान पूर्ति करने लगे तब वह बहुत कष्टकर स्थिति में फंस जायेगा — ऐसा नहीं हो पायेगा ।

Sri Aurobindo on Himself. — श्रीअरविन्द

***

साधना के अंग

साधना योग के अभ्यास को कहते हैं । साधना का फल प्राप्त करने के लिए तथा निम्न प्रकृति पर विजय पाने के लिए संकल्प की एकाग्रता को **तपस्या** कहते हैं । भगवान की पूजा, प्रेम, आत्म समर्पण, भगवान के लिए अभीप्सा, नाम स्मरण, प्रार्थना को **आराधना** कहते हैं । चेतना की आन्तरिक एकाग्रता, चिन्तन, समाधि में अन्दर जाना **ध्यान** कहलाता है । ध्यान, तपस्या तथा आराधना — ये सब साधना के अंग हैं ।

More Lights on Yoga — श्रीअरविन्द

***

इस योग में सारा सिद्धान्त ही है अपने आप को भागवत प्रभाव के प्रति उद्‌घाटित करना । यह तुम्हारे ऊपर हमेशा रहता है । यदि एक बार इसके प्रति सचेतन हो जाओ तब तुम्हें अपने अन्दर नीचे लाने के लिए उसे पुकारना होता है । यह शान्ति के रूप में, ज्योति के रूप में, शक्ति के रूप में जो कार्य करती है, निराकार या साकार भागवत उपस्थिति के रूप में, आनन्द के रूप में मन तथा शरीर में उतरता है । व्यक्ति में इस चेतना के आने से पहले उसे श्रद्धा रखनी पड़ती है और उद्‌घाटन के लिए अभीप्सा करनी पड़ती है । **अभीप्सा, पुकार, प्रार्थना एक ही वस्तु के रूप हैं तथा ये सब प्रभावकारी होते हैं ।** तुम किसी रूप को, जो स्वतः आता हो या जो तुम्हें सरलतम लगता हो, ग्रहण कर सकते हो ।

दूसरी विधि है एकाग्रता । हृदय में चेतना को एकाग्र करो (कुछ लोग सिर में या सिर के ऊपर चेतना की एकाग्रता का अभ्यास करते हैं) तथा हृदय में श्रीमाँ पर ध्यान करो तथा वहां उन्हें आने के लिए पुकार करो । व्यक्ति दोनों में से एक कर सकता है तथा अलग अलग समय पर दोनों कर सकता है — जो तुम्हें स्वाभाविक लगे अथवा उस समय जैसी प्रेरणा हो । विशेष कर आरम्भ में, बहुत बड़ी आवश्यकता होती है मन को अचंचल बनाने की । ध्यान के समय साधना के प्रतिकूल सभी

विचारों तथा गतिविधियों को अस्वीकार कर दो । अचंचल मन में अनुभव के लिए क्रमशः तैयारी होगी । परन्तु यदि परिणाम तुरन्त नहीं मिले तब तुम्हें अधीर नहीं होना होगा । मन में पूर्ण अचंचलता लाने में समय लगता है । तुम्हें चेतना के तैयार होने तक प्रयास करते रहना है ।

Bases of Yoga — श्रीअरविन्द

***

मन्त्र

ओम् मन्त्र है, जो तुरीय से लेकर बाह्य या भौतिक लोक तक अपने चारों अधिकार-क्षेत्रों में ब्रह्म-चेतना का द्योतक ध्वन्यात्मक प्रतीक है । मन्त्र का कार्य है आन्तरिक चेतना में स्पन्दनों की सृष्टि करना जो चेतना को मन्त्र के प्रतीक की सिद्धि के लिए तैयार करते हैं । वास्तव में मान्यता के अनुसार मन्त्र अपने प्रतीक को अपने अन्दर वहन करता है । ओम् मन्त्र इसलिए सभी भौतिक वस्तुओं में, आन्तरिक सत्ता में, अतिभौतिक जगतों में, ऊपर के कारण-लोक में जो हम सबके लिए अभी अतिचेतन है तथा अन्ततः समस्त वैश्व सत्ता के परे सर्वोच्च मुक्त विश्वातीत में निहित परमचेतना की दृष्टि एवं अनुभूति की ओर चेतना का उद्घाटन करता है । जो मन्त्र का उपयोग करते हैं वे अन्तिम चरण में मुख्य रूप से तल्लीन रहते हैं ।

इस योग में कोई सुनिश्चित मन्त्र नहीं है । मन्त्रों पर बल नहीं दिया जाता यद्यपि साधक को इससे लाभ होता हो या जब तक लाभ होता हो वे इसका उपयोग कर सकते हैं । बल बल्कि दिया जाता है चेतना में अभीप्सा पर तथा मन, हृदय, संकल्प, सम्पूर्ण सत्ता की एकाग्रता पर । यदि इसके लिए मन्त्र सहायक पाया जाता हो तब व्यक्ति इसका प्रयोग करता है । ओम् का उचित प्रयोग करने पर (यन्त्रवत् नहीं) यह ऊपर की ओर और बाहर की ओर (वैश्व चेतना) उद्घाटन में मदद के साथ साथ अवतरण में अच्छी तरह मदद कर सकता है ।

SABCL: 23: p.746 — श्रीअरविन्द

***

जप

जप की सफलता सामान्यतः इन दोनों में से किसी एक शर्त पर निर्भर करती है — यदि इसकी आवृति इसकी महत्ता को समझते हुए तथा इसके देवता की प्रकृति, शक्ति, सुन्दरता तथा आकर्षण पर मन में विचार करते हुए चेतना में लाने के लिए की जाती है । यह मानसिक विधि है । अथवा यदि यह हृदय से आता है या भक्ति के बोध या भावना के साथ इसे जीवन्त बनाते हुए हृदय में उमड़ता है, — यह भावनात्मक विधि है । मन को या प्राण को इसे समर्थन या पोषण देना पड़ता है । किन्तु यदि यह मन को शुष्क तथा प्राण को व्याकुल बनाये, तब उस समर्थन तथा पोषण का अभाव होता है । निश्चय ही एक तीसरी विधि है — मन्त्र या नाम की शक्ति पर ही भरोसा । परन्तु व्यक्ति को तब तक जारी रखना पड़ता है जब तक उस शक्ति ने पर्याप्त रूप से अपने स्पन्दन की आन्तरिक सत्ता पर छाप न छोड़ दी हो जिससे आन्तरिक सत्ता अचानक एक विशेष क्षण में उपस्थिति या स्पर्श के प्रति उद्‌घाटित हो जाये । परन्तु यदि परिणाम के लिए संघर्ष या आग्रह करना पड़े तब इसके प्रभाव में, जिसके लिए मन में अचंचल ग्रहणशीलता की आवश्यकता होती है, रुकावट आ जाती है । यही कारण है कि मैं मानसिक अचंचलता पर इतना आग्रह करता था, अधिक तनाव या प्रयास पर नहीं, जिससे चैत्य तथा मन को ग्रहणशीलता की आवश्यक अवस्था को विकसित करने का समय दिया जा सके — ऐसी ग्रहणशीलता जो कविता तथा संगीत की प्रेरणा ग्रहण करने के समान स्वाभाविक हो । इसलिए भी मैं नहीं चाहता कि तुम अपनी काव्य रचना बन्द कर दो, क्योंकि इससे तैयारी में मदद मिलती है । ग्रहणशीलता की समुचित स्थिति के विकास का तथा आन्तरिक सत्ता में निहित भक्ति को व्यक्त करने का यह एक साधन है । सारी ऊर्जा को जप या ध्यान में लगा देने से तनाव आ जाता है । अभ्यस्त या सफल ध्यानी के लिए भी इसे निभाना कठिन हो जाता है जब तक कभी-कभी ऊपर से अनुभवों का निर्बाध प्रवाह न होता हो ।

SABCL, Vol.23, p.745 — श्रीअरविन्द

***

अभीप्सा, प्रार्थना, भक्ति, प्रेम, समर्पण साधना के इस अंश के लिए मुख्य अवलम्ब हैं — इसके साथ उन सब का त्याग भी होना चाहिये जो उसकी प्राप्ति में बाधक हैं जिसके लिए अभीप्सा की जाती है ।

SABCL, Vol.25 — श्रीअरविन्द

***

आन्तरिक और बाह्य वस्तुओं के लिए श्रीमाँ से प्रार्थना

प्रश्न : आप कहते हैं, "साधक को साधना से सम्बन्धित आन्तरिक वस्तुओं तथा केवल साधना के लिए व भागवत कार्य के लिए बाह्य वस्तुओं की प्रार्थना करनी चाहिये । बाह्य चीजों के लिए प्रार्थना से सम्बन्धित परवर्ती अंश मुझे स्पष्ट नहीं हुआ । क्या कृपया स्पष्ट करेंगे ?"

उत्तर : यह सब इस बात पर निर्भर है कि क्या बाह्य वस्तुएं अपनी सुविधा, सुख, लाभ आदि के लिए मांगी जाती हैं या आध्यात्मिक जीवन के अंग के रूप में कार्य की सफलता के लिए, यन्त्र आदि के विकास तथा दुरुस्ती के लिए आवश्यक होने के कारण मांगी जाती हैं । यह मुख्यतः आन्तरिक मनोवृति का प्रश्न है । उदाहरण के लिए तुम स्वादिष्ट भोजन के लिए पैसे की प्रार्थना करते हो । यह साधक के लिए उचित नहीं है । यदि तुम श्रीमाँ के कार्य में मदद के लिए पैसे की प्रार्थना करते हो, तब यह युक्तियुक्त है ।

प्रश्न : मैं अनेक प्रकार की प्रार्थनाएं उद्धृत कर रहा हूँ जिन्हें मैं अर्पित करता हूँ । मैं कृतज्ञ रहूंगा यदि आप यह बताने की कृपा करें कि इनमें से कौन बाह्य या आन्तरिक, उचित या अनुचित, सहायक या बाधक हैं अथवा किस प्रकार सुधार करने पर वे शुद्ध हो सकती हैं ?

प्रश्न (a) : रात्रि में जब मैं पढ़ने के लिए बैठता हूँ तब नींद का असमय आक्रमण

होता है । मैं श्रीमाँ से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस आक्रमण से मुक्त करें ।

उत्तर : यदि तुम्हारा पठन साधना का अंग है तब यह ठीक है ।

प्रश्न (b) (i) : जब मैं सोने लगता हूँ तब मैं श्रीमाँ से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी शक्ति निद्रावस्था में मेरी साधना का अधिग्रहण कर ले, मेरी नींद को सचेतन, ज्योतिर्मय बनाये, नींद में मेरी रक्षा करे तथा श्रीमाँ के प्रति सचेतन बनाये रखे ।

(b) (ii) : जब कभी मैं नींद से जग जाता हूँ तब मैं श्रीमाँ से प्रार्थना करता हूँ कि वे मेरे साथ रहें और मेरी रक्षा करें ।

उत्तर : ये दोनों साधना के अंग हैं ।

प्रश्न (c) : जब मैं सैर करने के लिए बाहर जाता हूँ तब मैं श्रीमाँ से प्रार्थना करता हूँ कि वे अधिक कसरत करने तथा अधिक बल और स्वास्थ्य प्राप्त करने की शक्ति दें और मैं इसके लिए धन्यवाद देता हूँ ।

उत्तर : यदि बल और स्वास्थ्य के लिए अनुरोध साधना की आवश्यकता तथा यन्त्र की पूर्णता के विकास के लिए किया जाता है तब यह ठीक है ।

प्रश्न (d) : जब मैं सैर करते समय किसी कुत्ते को देखता हूँ तब मैं तुरन्त श्रीमाँ से प्रार्थना करता हूँ कि वे इसके आक्रमण से मेरी रक्षा करें तथा मेरे भय को दूर करें ।

उत्तर : सुरक्षा के लिए पुकार हमेशा स्वीकार्य है । भय से मुक्ति साधना का अंग है ।

प्रश्न (e) : जब मैं भोजन के लिए जाता हूँ तब मैं श्रीमाँ की शक्ति से यह प्रार्थना करता हूँ कि वे मुझे भोजन को उन्हें अर्पित करने में, पाचन क्रिया में तथा समता व अनासक्ति के साथ, किसी आग्रह, लालच, कामना से मुक्त होकर वैश्व आनन्द के समरस भाव में भोजन ग्रहण करने में मेरी मदद करें ।

उत्तर : यह भी साधना का अंग है ।

प्रश्न (f) : जब मैं कार्य करने जाता हूँ तब मैं श्रीमाँ की शक्ति से प्रार्थना करता हूँ कि वे मेरे कार्य का अधिग्रहण कर लें, उसे ठीक से सावधानीपूर्वक तथा प्रेमपूर्वक, भक्ति तथा आनन्द के साथ, माँ के नाम का स्मरण करते हुए, अहंकार या कामना से मुक्त होकर करने में मदद करें ।

उत्तर : यह भी साधना का अंग है ।

SABCL, Vol.25, pp. 315-16 — श्रीअरविन्द

प्रार्थना, श्रद्धांजलि, धार्मिक अनुष्ठान के नियम को अनेक बौद्धिक व्यक्ति तैयारी के लिए अत्यन्त आवश्यक मानते हैं और यदि इसी को लक्ष्य न मान लें तब आध्यात्मिक प्रगति के लिए इससे बहुत बड़ी मदद मिलती है । यदि इसे रोक दिया जाये तब इसके स्थान पर ध्यान, भक्ति या धार्मिक कर्त्तव्य का कोई अन्य रूप अवश्य होना चाहिये । अन्यथा धार्मिक शिक्षा का कोई उपयोग नहीं है और इसे महत्व न देना अधिक अच्छा होगा ।

SABCL, Vol.17 : The Moral Nature — श्रीअरविन्द

प्रश्न : क्या प्रार्थना और अभीप्सा एक ही चीज है ?

उत्तर : यह अभीप्सा की अभिव्यक्ति है या हो सकती है । क्योंकि कुछ ऐसी प्रार्थनाएं भी होती हैं जो केवल कामना को अभिव्यक्त करती हैं, जैसे धन के लिए प्रार्थना, सांसारिक सफलता के लिए प्रार्थना आदि ।

Elements of yoga — श्रीअरविन्द

प्रार्थना भावावेश या अभीप्सा के शीर्ष पर हृदय से उमड़नी चाहिये ।
— श्रीअरविन्द

प्रार्थना और ध्यान

प्रार्थना और ध्यान योग में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । परन्तु प्रार्थना हृदय की भावना अथवा अभीप्सा के शिखर से उमड़नी चाहिये । जप या ध्यान उसमें आनन्द या ज्योति के साथ जीवन्त प्रवाह में आता है । यदि इसे यन्त्रवत् या केवल अनिवार्य रूप से करणीय ड्यूटी के रूप में किया जाये तब इसमें रुचि का अभाव तथा शुष्कता की प्रवृति आने लगती है और इसलिए निष्प्रभाव हो जाता है ।... परिणाम लाने के लिए एक साधन के रूप में तुम जप कुछ अधिक ही कर रहे थे । इसीलिए मैं चाहता था कि तुम्हारे अन्दर मनोवैज्ञानिक अवस्थाएं — चैत्य, मानसिक अवस्थाएं विकसित हों क्योंकि जब चैत्य सामने होता है तब प्रार्थना में, अभीप्सा में, जिज्ञासा में प्राणवन्तता तथा प्रफुल्लता की कमी नहीं होती । भक्ति के सतत प्रवाह में कोई बाधा नहीं आती । जब मन अचंचल हो तथा अन्तर्मुखी तथा ऊर्ध्वमुखी हो तब ध्यान में रुचि का अभाव या कोई कठिनाई नहीं होती । प्रसंगवश, ध्यान ज्ञान की ओर जाने की एक प्रक्रिया है तथा ज्ञान का मार्ग मस्तिष्क से सम्बन्धित है, हृदय से नहीं । इसलिए यदि तुम ध्यान करना चाहते हो तब तुम्हारे अन्दर ज्ञान के प्रति अरुचि नहीं होनी चाहिये । हृदय में एकाग्रता ध्यान नहीं है । यह भगवान का, प्रेमी का आह्वान है । यह योग भी केवल ज्ञान योग नहीं है । ज्ञान इसके अनेक साधनों में से एक साधन है । परन्तु आत्मदान, समर्पण, भक्ति इसका मूल होने के कारण, यह हृदय में आधारित है और इसके बिना अन्ततः कुछ नहीं किया जा सकता । यहाँ बहुत से ऐसे लोग हैं जो जप करते हैं या कर चुके हैं तथा अपनी साधना को भक्ति पर अवलम्बित करते हैं । बहुत कम लोगों ने अपेक्षाकृत "मस्तिष्क" ध्यान किया है । सामान्यतः प्रेम, भक्ति तथा कर्म आधार हैं । कितने लोग ज्ञान के मार्ग पर जा सकते हैं ? केवल कुछ ही ।

SABCL, Vol.23, p. 533, Letters on Yoga part - II — श्रीअरविन्द

***

अनिवार्यताएं

गहराई में एक महत्तर गहराई है । ऊचाइयों में एक महत्तर ऊँचाई है । जैसे ही मनुष्य अपनी सत्ता की पूर्णता को प्राप्त कर लेगा, तभी वह असीमता की सीमाओं को भी छू लेगा । क्योंकि वह सत्ता असीम है, भगवान है ।

मैं अनन्त शक्ति, अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द की अभीप्सा करता हूँ । क्या मैं इसे उपलब्ध कर सकता हूँ ? हाँ, परन्तु अनन्तता की प्रकृति यह है कि इसका अन्त नहीं होता । इसलिए यह न कहो कि मैं इसे उपलब्ध करता हूँ । कहो, मैं यही बन जाता हूँ । केवल तभी, भगवान बन कर ही मनुष्य भगवान को पा सकता है ।

परन्तु भगवान को पाने से पहले वह उसके साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकता है । उसके साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए योग है, उच्चतम हर्षोन्माद, उच्चतम उदात्त उपयोग । मानवता के घेरे में जिसे अब तक हमलोगों ने विकसित किया है अनेक प्रकार के सम्बन्ध हैं । इन्हें प्रार्थना, पूजा, आराधना, यज्ञ, चिन्तन, श्रद्धा, विज्ञान, दर्शन कहा जाता है । हमारी विकसित क्षमता से परे अन्य सम्बन्ध हैं किन्तु मानवता के घेरे में अभी भी हमें विकसित करना है । उन सम्बन्धों को अनेक अनुशासनों द्वारा प्राप्त किया जाता है जिन्हें हम सामान्यतः योग कहते हैं ।

हो सकता है हम उसे भगवान के रूप में न जानते हों । उसे हम प्रकृति के रूप में जानते हों, अपनी ही उच्चतर सत्ता, अनन्तता, कुछ अनिर्वचनीय लक्ष्य के रूप में मानते हों । इसी प्रकार बुद्ध ने उसे प्राप्त किया । रूढ़ अद्वैतवादी भी उसे इसी प्रकार जानते हैं । वह नास्तिक के लिए भी सुलभ है । जड़वादी के लिए वह अपने आपको जड़-पदार्थ का छद्मवेश धारण कर लेता है । शून्यवादी के लिए वह विध्वंस के आगोश में घात लगाये बैठा रहता है ।

ये यथा माँ प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् जो जिस प्रकार हमारे पास आता है हम भी उसे उसी प्रकार प्रेमपूर्वक अपनाते हैं ।

CWSA 12 : p.5 — श्रीअरविन्द

(Essays Divine and Human)

राधा की प्रार्थना[1]

हे तू, जिसे मैंने प्रथम दृष्टि में अपनी सत्ता का स्वामी एवं अपना प्रभु जान लिया था, मेरी भेंट को स्वीकार कर ।

मेरे सभी विचार, मेरे सभी आवेग, मेरे हृदय की सभी भावनाएं, मेरी सभी संवेदनाएं, मेरे जीवन की सभी गतिविधियाँ, मेरे शरीर का प्रत्येक कोशाणु, मेरे रक्त की प्रत्येक बून्द तेरे हैं । मैं पूर्ण रूप से नितान्त तेरी हूँ । तेरी, अप्रतिबन्धित रूप से तेरी । तू जो मेरे लिए संकल्प करेगा, मैं वही बनूंगी । चाहे तू मेरे लिए जीवन चुने या मृत्यु, सुख या दुःख, आनन्द या कष्ट, जो कुछ तेरी ओर से मेरे पास आयेगा उसका स्वागत किया जायेगा । तेरा प्रत्येक उपहार मेरे लिए हमेशा एक दिव्य उपहार होगा जो अपने साथ परमानन्द लायेगा ।

CWSA Vol. 32 p.647 — श्रीमाँ

1. श्रीमाँ द्वारा मूल रूप से फ्रेन्च में लिखी गई इस प्रार्थना के श्रीअरविन्द द्वारा अंग्रेजी में अनूदित अंश से हिन्दी में रूपान्तरित ।

भगवान अपने आपको उन्हें दे देते हैं जो बिना कुछ बचाये, अपना सर्वस्व तथा अपने समस्त भागों में अपने आपको भगवान के चरणों में निवेदित कर देते हैं । उनके लिए है स्थिरता, ज्योति, शक्ति, स्वर्ग-सुख, मुक्ति, विशालता, ज्ञान की पराकाष्ठा, आनन्द का सागर ।

— श्रीअरविन्द

कुछ नये साल की प्रार्थनाएं

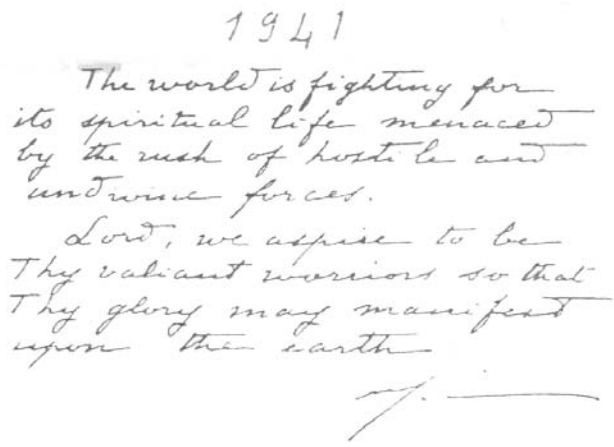
1941

The world is fighting for
its spiritual life menaced
by the rush of hostile and
untrue forces.

Lord, we aspire to be
Thy valiant warriors so that
Thy glory may manifest
upon the earth

M.

विरोधी तथा अदिव्य शक्तियों के आक्रमण से संकटापन्न विश्व अपने आध्यात्मिक जीवन के लिए संघर्षरत है ।

हे प्रभु, हम तेरे पराक्रमी योद्धा बनने की अभीप्सा करते हैं जिससे तेरी महिमा धरती पर अभिव्यक्त हो सके ।

— श्रीमाँ

हमें केवल भागवत कृपा पर विश्वास रखना चाहिये तथा सभी परिस्थितियों में उसकी सहायता मांगने के लिए उसे पुकारना चाहिये । तब यह हमेशा चमत्कार करेगी ।

— श्रीमाँ

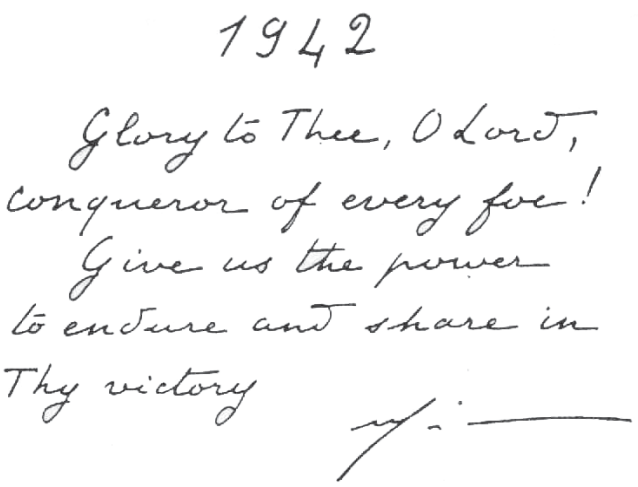

प्रत्येक शत्रु के विजेता, हे प्रभु, तेरी महिमा फैले ! हमें धीरज रखने तथा तेरी विजय में भागीदार बनने की शक्ति दे ।

— श्रीमाँ

हमारा समस्त जीवन भगवान को अर्पित एक प्रार्थना होना चाहिये ।

— श्रीमाँ

1943

The hour has come when a choice has to be made radical and definitive.

Lord, give us the strength to reject falsehood and emerge in Thy truth, pure and worthy of Thy victory.

M.

वह क्षण आ गया है जब मूलभूत तथा सुनिश्चित चुनाव करना होगा ।

हे प्रभु, मिथ्यात्व का त्याग करने और शुद्ध तथा तेरी विजय के योग्य बन कर तेरे सत्य में ऊपर उठने की हमें शक्ति दे ।

— श्रीमाँ

प्रार्थना एक व्यक्तिगत चीज है जो एक व्यक्तिगत सत्ता को सम्बोधित की गई हो यानी एक शक्ति को या एक सत्ता को जो तुम्हारी प्रार्थना सुन सके और उत्तर दे सके । अन्यथा तुम किसी चीज के लिए मांग नहीं कर सकते ।

— श्रीमाँ

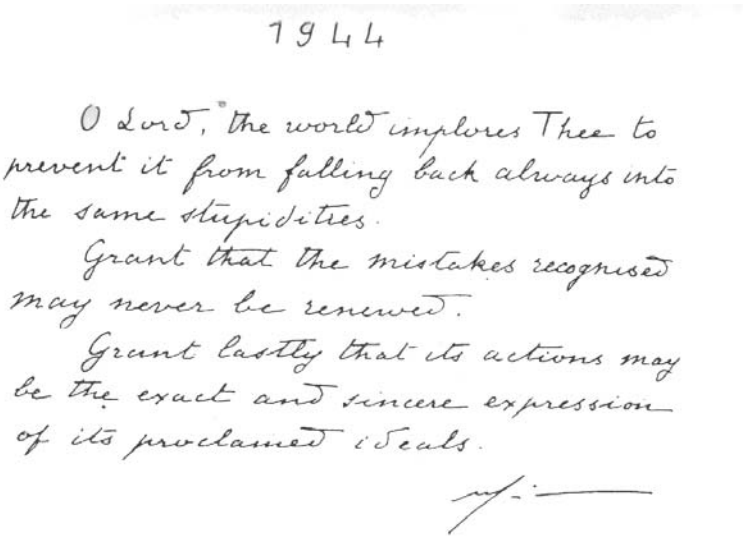
1944

O Lord, the world implores Thee to prevent it from falling back always into the same stupidities.

Grant that the mistakes recognised may never be renewed.

Grant lastly that its actions may be the exact and sincere expression of its proclaimed ideals.

हे प्रभु, विश्व हमेशा एक ही प्रकार की मूर्खताओं में गिरने से रोकने के लिए तुझसे याचना कर रहा है ।

स्वीकार कर कि जिन भूलों की पहचान कर ली गई है उन्हें दुबारा वह न करे । अन्त में यह स्वीकार कर कि इसके कर्म इसके घोषित आदर्शों की हूबहू तथा सच्ची अभिव्यक्ति हों ।

— श्रीमाँ

जब व्यक्ति नियमित रूप से मंत्र की आवृति करता है तब प्राय: यह अपने आपको अन्दर दुहराता है, जिसका अर्थ यह होता है कि इसे आन्तरिक सत्ता ने ग्रहण कर लिया है । इस प्रकार यह अधिक प्रभावकारी बन जाता है ।

— श्रीअरविन्द

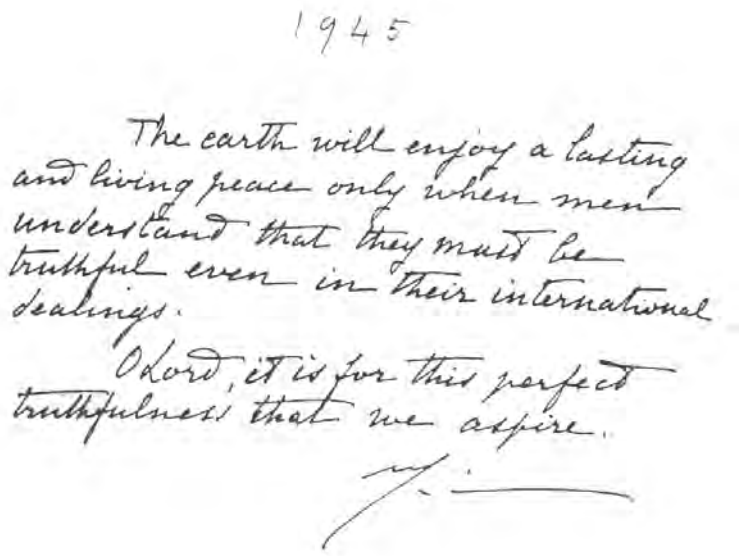

धरती को केवल स्थायी तथा जीवन शान्ति का आनन्द प्राप्त होगा जब मनुष्य यह समझ लेंगे कि उन्हें अपने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहारों में भी सत्यनिष्ठ बनना होगा ।

हे प्रभु, इसी पूर्ण सत्यनिष्ठता के लिए हम सब अभीप्सा करते हैं ।

— श्रीमाँ

योग का दबाव पड़ने के कारण जो इच्छाएं और वासनाएं ऊपर उभर आती हैं उनका अनासक्त होकर शान्ति के साथ मुकाबला करना चाहिये । यह समझना चाहिये कि ये विजातीय वस्तुएं हैं अथवा बाह्य जगत की चीजें हैं जिनसे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है । उन्हें भगवान को सौंप देना चाहिये ताकि भगवान उनको अपने हाथ में ले लें और उनका रूपान्तर कर दें ।

— श्रीमाँ

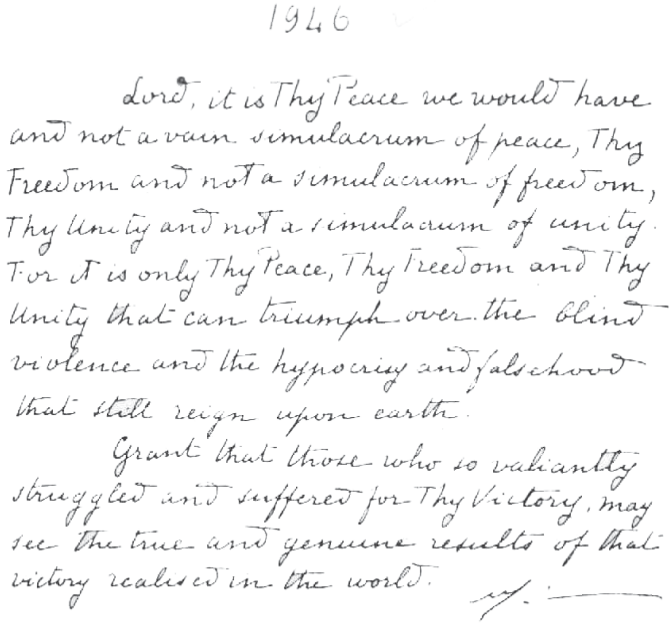
1946

Lord, it is Thy Peace we would have and not a vain simulacrum of peace, Thy Freedom and not a simulacrum of freedom, Thy Unity and not a simulacrum of unity. For it is only Thy Peace, Thy Freedom and Thy Unity that can triumph over the blind violence and the hypocrisy and falsehood that still reign upon earth.

Grant that those who so valiantly struggled and suffered for Thy Victory, may see the true and genuine results of that victory realised in the world.

हे प्रभु, हम तेरी शान्ति न कि इसकी व्यर्थ छाया, तेरी मुक्ति न कि इसका आभास, तेरा एकत्व न कि एकत्व की नकल प्राप्त करना चाहेंगे क्योंकि केवल तेरी शान्ति, तेरी मुक्ति और तेरा एकत्व ही अन्ध हिंसा, पाखण्ड तथा मिथ्यात्व पर, जो अभी भी धरती पर शासन करते हैं, विजय प्राप्त कर सकता है ।

स्वीकार कर कि जिन्होंने इतनी वीरता से तेरी विजय के लिए संघर्ष किया और कष्ट झेला, वे विश्व में अर्जित उस विजय का वास्तविक परिणाम देख सकें ।

— श्रीमाँ

ओम मंत्र है, ब्रह्म-चेतना का, तुरिया से लेकर इसके भौतिक लोकों के चार क्षेत्रों में ध्वनि-प्रतीक । मंत्र का कार्य है आन्तरिक चेतना में कम्पन उत्पन्न करना और मंत्र जिसका प्रतीक है और जिसे अपने अन्दर वहन करता है उसकी सिद्धि के लिए इसे तैयार करना ।...

— श्रीअरविन्द